मौर्यवंशम



भूमिका

भारतीय इतिहास के गौरवशाली पृष्ठों में मौर्य राजवंश एक ऐसे देदीप्यमान नक्षत्र के समान है, जिसने न केवल आर्यावर्त को राजनैतिक एकता के सूत्र में पिरोया, बल्कि सभ्यता और संस्कृति के नए प्रतिमान भी स्थापित किए। हिमालय की कंदराओं से लेकर सुदूर दक्षिण के पठारों तक और गांधार की सीमाओं से लेकर मगध की उर्वर भूमि तक फैला यह साम्राज्य भारतीय शौर्य और मेधा का चरमोत्कर्ष था। किंतु, कालान्तर में कुछ संकुचित विचारधाराओं और उत्तर-मध्यकालीन टीकाकारों के भ्रामक अनुवादों के कारण इस महान राजवंश की उत्पत्ति को लेकर अनेक भ्रांतियाँ उत्पन्न की गईं।

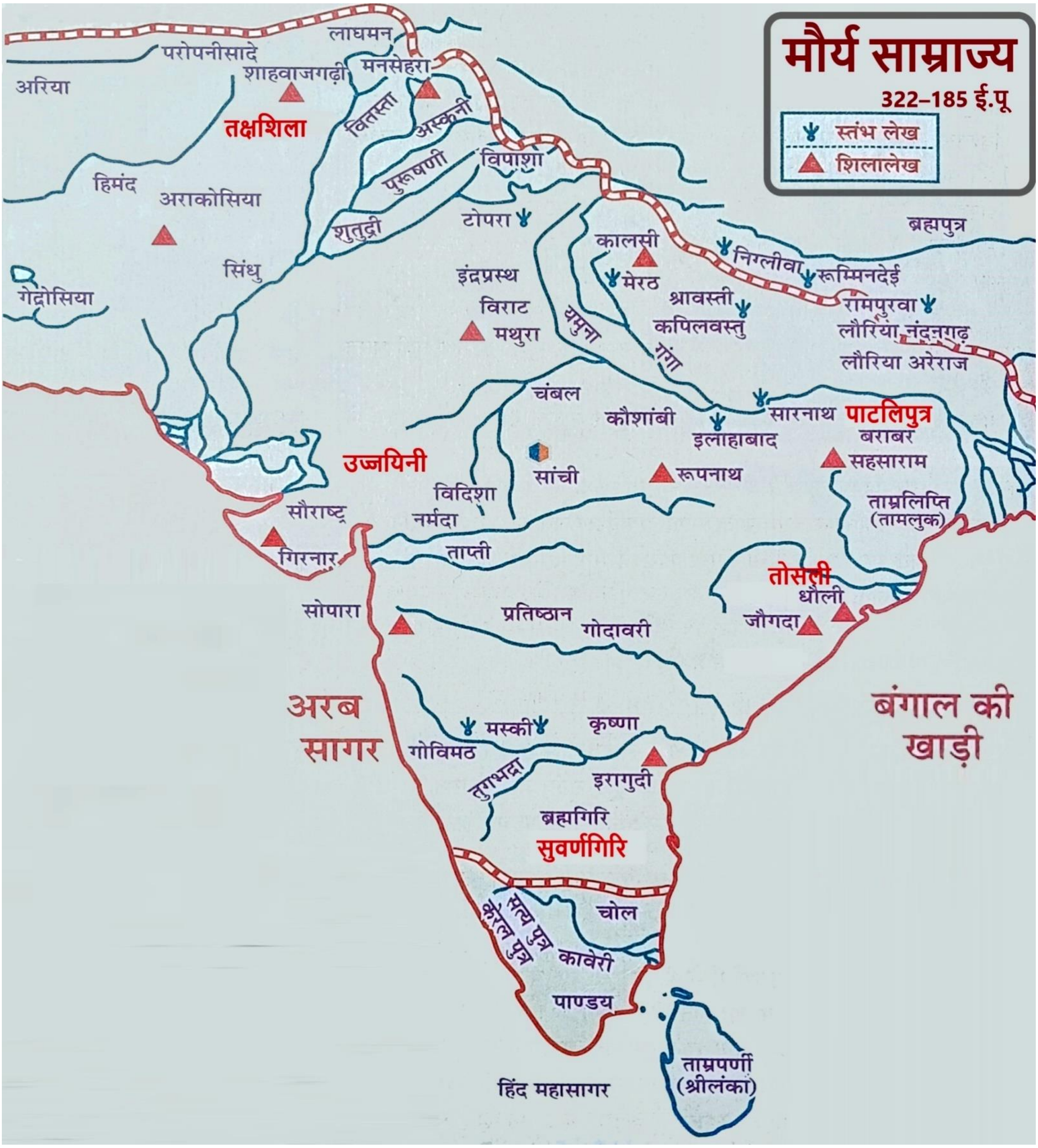
प्रस्तुत शोधपरक कृति का मुख्य उद्देश्य उन सभी ऐतिहासिक धुंधलकों को साफ करना है जो मौर्यों के उच्च कुलीन क्षत्रियत्व पर प्रश्नचिह्न खड़ा करते हैं। यह पुस्तक केवल एक विवरण मात्र नहीं है, अपितु यह शिलालेखों, प्राचीन ग्रंथों, जैन और बौद्ध परंपराओं तथा विदेशी वृत्तांतों का एक ऐसा संकलन है, जो भावी शोधकर्ताओं के लिए एक सुदृढ़ आधारशिला सिद्ध होगी।

मौर्यों को 'शूद्र' बताने का आधुनिक विलाप मुख्य रूप से 18वीं शताब्दी के टीकाकार ढुंढिराज द्वारा 'मुद्राराक्षस' पर लिखे गए भाष्य और 'मुरा' नामक काल्पनिक पात्र के इर्द-गिर्द घूमता है। भाषावैज्ञानिक दृष्टि से यह प्रमाणित है कि 'मुरा' शब्द से 'मौरेय' बन सकता है, 'मौर्य' नहीं। प्राचीनतम उपलब्ध साक्ष्य जैसे 'विष्णु पुराण' का मूल पाठ चंद्रगुप्त को "राजकुल में उत्पन्न" (उत्पन्नं) मानता है, न कि दासी पुत्र। बौद्ध और जैन परंपराएं मौर्यों को पिप्पलीवन के 'मोरिय' क्षत्रिय गणराज्य से संबंधित मानती हैं, जो मूलतः इक्ष्वाकु वंशीय शाक्यों की ही एक शाखा थी। उत्तरविहार-अट्टकथा के अनुसार, सम्राट चंद्रगुप्त आदित्य गोत्र (सूर्यवंश) के क्षत्रिय थे। इसी प्रकार, जैन ग्रंथ 'बृहत्कल्पसूत्र' उन्हें "मयूरपोषक अभिजात (उच्चवंशीय) क्षत्रिय" कहकर संबोधित करता है।

यह पुस्तक मौर्य इतिहास के उन क्षेत्रीय आयामों को भी स्पर्श करती है जिन्हें प्रायः उपेक्षित किया गया है। मौर्यों की उपस्थिति केवल मगध तक सीमित नहीं थी; अपितु महाराष्ट्र के वाघली शिलालेख, राजस्थान के कंसवा और मानमोरी शिलालेख, कश्मीर की राजतरंगिणी, और कोंकण-गोवा के अनिर्जितवर्मन मौर्य के ताम्रपत्रों में उनकी शाखाओं का विस्तृत विवरण मिलता है। ये सभी शिलालेख मौर्यों को सूर्यवंशी, इक्ष्वाकु वंशीय और 'महाशाक्य' के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं।

इस पुस्तक में प्रत्येक दावे को पुष्ट करने के लिए "पूरा उद्धरण और पूरा संदर्भ" देने की पद्धति अपनाई गई है। चाणक्य के 'अर्थशास्त्र' में वर्णित राजा के गुणों (महाकुलीनत्व) से लेकर यूनानी इतिहासकारों जैसे प्लूटार्क और जस्टिन द्वारा चंद्रगुप्त के 'सामान्य जन्म' की सही ऐतिहासिक व्याख्या तक, हर तथ्य को तर्क की कसौटी पर कसा गया है। यूनानी साक्ष्य स्वयं धनानंद को तो 'नीच कुल' का बताते हैं, किंतु चंद्रगुप्त को एक स्वाभिमानी और श्रेष्ठ योद्धा के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

यह पुस्तक ऐतिहासिक न्याय की दिशा में एक कदम है। यह ग्रंथ उन सभी पाठकों और शोधार्थियों को समर्पित है जो इतिहास को केवल कथाओं के रूप में नहीं, बल्कि प्रमाणों और शिलालेखों की भाषा में समझना चाहते हैं। मौर्यों का इतिहास भारत के आत्मसम्मान का इतिहास है, और इसे इसके मूल स्वरूप में प्रस्तुत करना ही इस लेखनी का परम लक्ष्य है।



महलके हि विजिते बहु च लिखिते लिखपेशमि चेव

—सम्राट अशोक, प्रमुख शिलालेख संख्या 14

मेरा साम्राज्य बहुत बड़ा है, बहुत लिखा गया है, और बहुत नित्य लिखवाऊंगा।

मौर्यवंशम

प्रथम खंड

विषय सूची | पृष्ठ

द्वितीय खंड

तृतीय खंड

1 - मौर्य क्षत्रिय उत्पत्ति मीमांशा

• मौर्य आर्य है

प्राचीन भारतीय इतिहास के गौरवशाली मौर्य राजवंश की जातीय अस्मिता और उनके 'आर्य' होने के प्रमाण विविध साहित्यिक ग्रंथों, नाटकों और शिलालेखों में प्रचुरता से उपलब्ध हैं। मौर्यों को 'आर्य' संबोधित करना उनकी उच्च कुलीनता, क्षत्रियत्व और सांस्कृतिक श्रेष्ठता का परिचायक है। इस संदर्भ में प्रमुख प्रमाण निम्नलिखित हैं:

1. **बौद्ध ग्रंथ 'दिव्यावदान' का प्रमाण:** बौद्ध संस्कृत ग्रंथ 'दिव्यावदान' के 'पांशुप्रदानावदान' में सम्राट अशोक को स्पष्ट रूप से 'आर्य' और 'मौर्यश्री' कहकर संबोधित किया गया है। यह संबोधन उनकी राजवंशीय गरिमा को रेखांकित करता है: [1]

"आर्यो मौर्यश्रीः स प्रजानां हितार्थं कृत्स्ने स्तूपान् यः कारयामास लोके।"
संदर्भ: (दिव्यावदान: 26 पांशुप्रदानावदान - 241)
अर्थ: आर्य मौर्यश्री (सम्राट अशोक) ने प्रजा के कल्याण हेतु संपूर्ण लोक में स्तूपों का निर्माण करवाया।

इसी ग्रंथ में सम्राट बिंदुसार और अशोक स्वयं को 'मूर्धाभिषिक्त क्षत्रिय' कहते हैं, जो आर्य वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत उनके उच्च स्थान को पुष्ट करता है।

2. **शिलालेखों में 'आर्यपुत्र' का प्रयोग:** सम्राट अशोक के लघु शिलालेखों में राजपरिवार के सदस्यों, विशेषकर राजकुमारों के लिए 'आर्यपुत्र' (अयपुत) शब्द का प्रयोग हुआ है। यह शब्द केवल आर्य कुलोत्पन्न राजकुमारों के लिए ही प्रयुक्त होता था।[2]

"सुवंणगिरीते अयपुतस महामाताणं च वचनेन इसिलसि महामाता आरोगियं वतविया..."
संदर्भ: (ब्रह्मगिरि लघु शिलालेख, पंक्ति 1)
अर्थ: सुवर्णगिरि से आर्यपुत्र (राजकुमार) और महामात्रों की आज्ञा से इषिला के महामात्यों का कुशल-क्षेम पूछा जाना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, मथुरा से प्राप्त मध्यकालीन मौर्य शिलालेख में भी मौर्य शासक के लिए 'आर्यराज' नाम मिलता है:[3]

"...मौर्य-नृपान्वये नृपतिः श्री कृष्णराजो आर्यराज-नृपतिः श्रीचन्द्रगुप्तात्म..."
संदर्भ: (मथुरा मौर्य शिलालेख)

---

[1] *Pāṁśupradānāvadānam* (Divyavadana, Chapter 26), Digital Sanskrit Buddhist Canon (DSBC) Edition. Input by DSBC Staff, proofread by Miroj Shakya. Nagarjuna Institute of Exact Methods / University of the West, 2006.
[2] "Brahmagiri Minor Rock Edict I, Line 1," in *Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol. I: Inscriptions of Asoka*, ed. E. Hultzsch (Oxford: Clarendon Press, 1925), 175–178.
[3] EPIGRAPHIA INDICA, Volume XXXII (1957-58), Pg.211-212

3. **'मुद्राराक्षस' नाटक का साक्ष्य:** विशाखदत्त रचित प्रसिद्ध नाटक 'मुद्राराक्षस' में, जो मौर्यकालीन घटनाओं पर आधारित है, चाणक्य और चंद्रगुप्त के संवादों में 'आर्य' शब्द का सम्मानजनक प्रयोग मिलता है। जब चंद्रगुप्त सिंहासन पर विराजमान होते हैं, तब चाणक्य उन्हें 'वृषल' (जिसका एक अर्थ 'श्रेष्ठ' भी है)[4] कहकर और अन्य जगह चंद्रगुप्त खुद को ''आर्य' कहकर संबोधित करते हैं।

राजा :- (आसनोंदुत्थाय । आर्य चन्द्रगुप्तः प्रणमति । इति पादयोः पतति ।
चाणक्य :- पाणौ गृहीत्वा । उत्तिष्ठोत्तिष्ठ वत्स ।
संदर्भ: (मुद्राराक्षस: अंक 3)[5]
अर्थ: चन्द्रगुप्त :- (सिंहासन से उठ कर) आर्य चन्द्रगुप्त दण्डवत् प्रणाम करता है ।
चाणक्य :- (हाथ पकड़ कर उठाकर) उठो पुत्र । उठो ।

4. **'अर्थशास्त्र' में कुलीनता का आधार:** आचार्य चाणक्य ने 'अर्थशास्त्र' में एक आदर्श राजा के लिए 'महाकुलीन' (उच्च कुल में उत्पन्न) होने को अनिवार्य गुण माना है:[6]

महाकुलीनो दैवबुद्धिसत्त्वसम्पन्नो वृद्धदर्शी धार्मिकः सत्यवागविसंवादकः कृतज्ञो महोत्साहो दीर्घदर्शी शक्यसामन्तो दृढबुद्धिरक्षुद्रपरिषत्को विनयकाम इत्यात्मसम्पत्।
संदर्भ: (अर्थशास्त्र- अधिकरण-6: अध्याय 1: श्लोक 3)
अर्थ: राजा की व्यक्तिगत योग्यता (आत्मसंपत्ति) यह है कि वह उच्च कुल में जन्मा हो; भाग्यवान, तीक्ष्ण बुद्धि और धैर्यशाली हो; वृद्ध एवं अनुभवी ज्ञानियों का मार्गदर्शन लेने वाला हो; धार्मिक और सत्यवादी हो; अपनी बात का पक्का और कृतज्ञ हो; महान उत्साही और दूरदर्शी हो; सामंतों को नियंत्रण में रखने में सक्षम हो; दृढ़ संकल्पी हो; दुष्ट सलाहकारों से दूर रहने वाला और अत्यंत विनयशील हो।

चूँकि चाणक्य ने चंद्रगुप्त का चयन नंदों के विनाश और धर्म की स्थापना के लिए किया था, अतः यह स्पष्ट है कि चंद्रगुप्त उनके मानदंडों के अनुसार 'आर्य' और 'महाकुलीन' थे।

उपरोक्त साहित्यिक और अभिलेखीय प्रमाणों से यह निर्विवाद रूप से सिद्ध होता है कि मौर्य शासक न केवल क्षत्रिय थे, अपितु उन्हें प्राचीन भारत की 'आर्य' परंपरा में अत्यंत सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। 'आर्यपुत्र', 'आर्यराज' और 'आर्य मौर्यश्री' जैसे संबोधन उनके इसी गौरवशाली परिचय की पुष्टि करते हैं।

---

[4] राधाकुमुद मुखर्जी, चन्द्रगुप्त मौर्य एंड हिज टाइम्स (दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास रिसर्च पब्लिशर्स, 1943), पृष्ठ 11
[5] विशाखदत्त, मुद्राराक्षस, सं. निरूपण विद्यालंकार, (मेरठ: रति राम शास्त्री, 2007), पृष्ठ 410
[6] कौटिल्य, कौटलीय अर्थशास्त्र (हिन्दी अनुवाद सहित), अनु. उदयवीर शास्त्री (लाहौर: मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास, 1925), पृष्ठ 204

• मौर्यो की उत्पत्ति कैसे हुई ?

मौर्य राजवंश की उत्पत्ति का इतिहास अत्यंत प्राचीन और गौरवशाली है, जिसका सीधा संबंध इक्ष्वाकु वंशीय शाक्य गणराज्य से जुड़ा है। ऐतिहासिक साक्ष्यों और प्राचीन बौद्ध तथा जैन ग्रंथों के अनुसार, मौर्यों का उदय शाक्य क्षत्रियों की एक शाखा के रूप में हुआ। उनकी उत्पत्ति की प्रक्रिया निम्नलिखित ऐतिहासिक घटनाक्रम से स्पष्ट होती है:

1. शाक्य गणराज्य का विस्थापन और पिपलिवावन का बसना: कोसल नरेश प्रसेनजित के पुत्र विदूदभ ने अपने कुल के अपमान का प्रतिशोध लेने हेतु शाक्य गणराज्य (कपिलवस्तु) पर भीषण आक्रमण किया। इस नरसंहार से बचकर कुछ शाक्य क्षत्रिय सुरक्षित रूप से हिमालय की तराई में पलायन कर गए। वहाँ उन्होंने एक ऐसे स्थान को चुना जो पीपल (पिप्पल) के वृक्षों से आच्छादित था। इसी स्थान पर उन्होंने 'पिपलिवावन' (या पिप्पलीवन) नामक नवीन गणराज्य की स्थापना की।[7]

2. 'मोरिया' (मौर्य) नामकरण का कारण: इस नवीन नगर के मौर्य कहलाने के पीछे प्रमुख कारण वहाँ मयूरों की प्रचुरता और नगर की स्थापत्य कला थी। महावंश की टीका 'वंसत्थप्पकासिनी' के अनुसार:[8]

तेहि पन धरमाने येव भगवति विडूडभेन उपद्दुता केचि साकिया हिमवन्तं पविसित्वा अञ्ञतरं सलिलासयसम्पन्नं उस्सन्नपिप्पलिवनादिपादपवनेहि उपसोभितं रमणीयं भूमिभागं दिस्वा तत्थाभिनिविट्ठपेमहदया तस्मि ठाने सुविभत्तमहापथद्वारकोट्ठकं थिरपाकारपरिखापरिक्खित्तं आरामउय्यानादिविविधरामणेय्यसम्पन्नं नगरवरं मापेसुं। अपि च तं मयूरगीवसङ्कासछदनिट्ठकपासादन्तिकं च मयूरकेका नादेहि पूरितं उग्घोसितं च अहोसि। तेन तस्स नगरस्स सामिनो साकिया च तेसं पुत्तपपुत्ता च सकलजम्बुदीपे मोरिया नामा ति पाकटा जाता।

संदर्भ: (वंसत्थप्पकासिनी - संगीति 3 : परिच्छेद 5 : 16)

अर्थ: भगवान बुद्ध के जीवन काल में ही जब विडूडभ (कोशल नरेश) के आक्रमण से पीड़ित होकर कुछ शाक्य हिमालय क्षेत्र में प्रविष्ट हुए, तब उन्होंने जलाशय से युक्त और पीपल आदि वृक्षों के घने वनों से सुशोभित एक रमणीय भूमि-भाग देखा। वहाँ बसने की इच्छा से उन्होंने एक सुव्यवस्थित महामार्ग, द्वार-कोष्ठक, सुदृढ़ प्राचीर (चारदीवारी) और खाई (परिखा) से सुरक्षित तथा उद्यानों से सुसज्जित एक श्रेष्ठ नगर का निर्माण किया। वह नगर मयूर की गर्दन के समान नीले रंग की छतों वाले प्रासादों से युक्त था और मयूरों की केका-ध्वनि से गूँजता रहता था। इसी कारण उस नगर के स्वामी शाक्य और उनकी संतान संपूर्ण जम्बूद्वीप में मोरिय (मौर्य) नाम से प्रसिद्ध हुए।

3. मौर्यो का राजवंशीय वंशक्रम : प्राचीन सिंहली ग्रंथ 'उत्तरविहार-अट्टकथा' (जिसका लेखन महेंद्र ने किया था) मौर्यों के तत्कालीन शासक परिवार का विवरण देता है। इसके अनुसार सम्राट चंद्रगुप्त के पिता पिप्पलीवन के राजा थे:[9]

"मोरिय नगरे चन्दवड्डनो खत्तिया राजा नाम रज्ज करोति मोरिव नगरे नाम पिप्पलिवावनिया गामो अहोसि ।........ चन्द वड्डनो राजस्स मोरियरञ्ञो सा अहू अग्ग महेसी धम्ममोरिया पुत्ता तस्सासि चन्द्रगुप्तो 'ति ॥ आदिच्चा नाम गोतेन साकिया नाम जातिया ।

संदर्भ: (उत्तरविहार-अट्टकथा : पृष्ठ 1)

अर्थ: मौर्य नगर (पिप्पलीवन) में 'चंद्रवर्धन' नामक क्षत्रिय राजा राज्य करते थे। उनकी महारानी का नाम 'धम्ममोरिया' (धर्मदिवी) था। इन दोनों के पुत्र चंद्रगुप्त हुए, जो आदित्य गोत्र (सूर्यवंश) और शाक्य जाति के मौर्य क्षत्रिय थे।

---

[7] Barua, Beni Madhab. Asoka and His Inscriptions (Parts I & II), 1955. Page 50.

[8] वंशत्थप्पकासिनी (महावंस-टीका), सं. डॉ. श्रीधर वासुदेव सोहोनी (पटना: नव नालंदा महाविहार), गाथा/परिच्छेद 5 (संगीति 3), पृष्ठ 144

[9] सिद्धार्थ वर्द्धन सिंह (अनु.), उत्तरविहार अट्ठकथा, (सारनाथ, वाराणसी: पी॰ यस॰ पब्लिकेशन, 2020), पृष्ठ 1

5. **बौध्य ग्रंथों में पुष्टीकरण:** 'महाबोधिवंश' और 'विनयपिटक' की टीकाओं में भी चंद्रगुप्त को राजकुल और क्षत्रिय कुल में उत्पन्न बताया गया है:[10]

ततो विडूढभसङ्गमे कपिलावत्थुतो निक्खन्तसक्यपुत्तेहि मापिते मोरियनगरे नरिन्दकुलसम्भवो चन्दगुत्तकुमारो चाणक्कद्विजपतिसमुस्सहितो पाटलिपुत्ते राजा अहोसि।
संदर्भ: (महाबोधिवंश - द्वितीयसंगितिकथा - पृष्ठ 98)
अर्थ: तत्पश्चात, विडूडभ के आक्रमण के समय कपिलवस्तु से निकलकर भागे हुए शाक्यपुत्रों द्वारा बसाए गए मोरियनगर में राजाओं के कुल (नरेन्द्र-कुल) में जन्मे राजकुमार चंद्रगुप्त ने श्रेष्ठ ब्राह्मण चाणक्य की सहायता से पाटलिपुत्र में राजा पद प्राप्त किया।

इसी प्रकार 'आर्य मञ्जुश्रीमूलकल्प' में भी उनके उच्च कुलीन जन्म की पुष्टि होती है:[11]

"जातो राजकुले चन्द्रगुप्तस्य धीमतः ॥"
संदर्भ: (आर्य मञ्जुश्रीमूलकल्प : पटलविसर : अध्याय 53 : श्लोक 413)
अर्थ: बुद्धिमान (धीमान) चंद्रगुप्त का जन्म राजाओं के कुल (राजवंश) में हुआ था।

प्राचीन स्रोतों के गहन विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि मौर्यों की उत्पत्ति किसी साधारण या निम्न कुल से नहीं, अपितु इक्ष्वाकु वंशीय शाक्य क्षत्रियों के उस समूह से हुई जिन्होंने पिप्पलीवन में मयूरों के सान्निध्य में अपना नया राज्य स्थापित किया था। चंद्रवर्धन और धर्मदिवी उनके ऐतिहासिक माता-पिता थे।

---

[10] द महा-बोधि-वंस, सं. एस. आर्थर स्ट्रॉन्ग (लंदन: पालि टेक्स्ट सोसाइटी / ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1891), पृष्ठ 98

[11] आर्यमञ्जुश्रीमूलकल्प, सं. टी. गणपति शास्त्री (तिरुवनंतपुरम: ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट एंड मैन्युस्क्रिप्ट्स लाइब्रेरी, 2008), पटलविसर 53, श्लोक 413, पृष्ठ 613

• शाक्य इक्ष्वाकु उत्पति निर्णय

मौर्य राजवंश की उत्पत्ति का मूलाधार इक्ष्वाकु वंशीय शाक्य गणराज्य है। ऐतिहासिक और पौराणिक साक्ष्य निर्विवाद रूप से प्रमाणित करते हैं कि शाक्य स्वयं सूर्यवंश (इक्ष्वाकु वंश) की एक प्रतिष्ठित शाखा थे और मौर्य उसी शाखा से उद्भूत हुए। इस अंतर्संबंध को पुष्ट करने वाले प्रमुख प्रमाण निम्नवत हैं:

1. **अश्वघोष कृत 'सौन्दरनन्द महाकाव्य' का साक्ष्य:** प्रथम शताब्दी के महाकवि अश्वघोष ने शाक्यों की उत्पत्ति का संबंध स्पष्ट रूप से इक्ष्वाकु वंश से जोड़ा है। उनके अनुसार, इक्ष्वाकु वंशीय राजकुमारों ने शाक वृक्षों के वन में निवास किया, जिसके कारण वे 'शाक्य' कहलाए:[12]

अथ तेजस्विसदनं तपःक्षेत्रं तमाश्रमम्। केचिदिक्ष्वाकवो जग्मू राजपुत्रा विवत्सवः॥१८॥
संदर्भ: (सौन्दरनन्द महाकाव्य : सर्ग 1 : श्लोक 18)
अर्थ: तब तेजस्वियों के निवास स्थान और तपस्या के क्षेत्र उस आश्रम में कुछ इक्ष्वाकु वंशी राजकुमार रहने की इच्छा से गए।

शाकवृक्षप्रतिच्छन्नं वासं यस्माच्च चक्रिरे। तस्मादिक्ष्वाकुवंश्यास्ते भुवि शाक्या इति स्मृताः॥२४॥
संदर्भ: (सौन्दरनन्द महाकाव्य : सर्ग 1 : श्लोक 24)
अर्थ: उन्होंने जिस स्थान पर निवास किया वह शाक-वृक्षों से ढका था, इसलिए वे इक्ष्वाकुवंशी पृथ्वी पर 'शाक्य' कहलाए।

2. **पौराणिक प्रमाण (नरसिंह पुराण):** हिंदू पुराणों में भी शाक्यों के राजा शुद्धोदन और भगवान बुद्ध को आदित्यवंश (सूर्यवंश) का बताया गया है:

वस्त्रपाणेः शुद्धोदनः शुद्धोदनाद्बुधः । बुधादादित्यवंशो निवर्तते ॥ १५ ॥ सूर्यवंशभवा ये ते प्राधान्येन प्रकीर्तिताः । यैरियं पृथिवी भुक्ता धर्मतः क्षत्रियैः पुरा ॥ १६ ॥
संदर्भ: (नरसिंह पुराण : अध्याय 21 : श्लोक 15-16)
अर्थ: वस्त्रपाणि से शुद्धोदन और शुद्धोदन से बुध (बुद्ध) की उत्पत्ति हुई। बुद्ध से आदित्यवंश (शाखा रूप में) वर्णित है। सूर्यवंश में उत्पन्न हुए ये क्षत्रिय मुख्य रूप से प्रकीर्तित हैं, जिन्होंने पूर्वकाल में पृथ्वी का धर्मपूर्वक पालन किया।

3. **गोविन्दराज मौर्य का वाघली शिलालेख (1069 ईस्वी):** यह शिलालेख मौर्यों की वंशावली को सीधे सूर्यवंश, मनु और मान्धाता से जोड़ता है:[13]

सुतः कश्यपोभू -- तदनु मनुरभूत्तद्युतात्सूर्यवंशः। विख्यातः सर्वलोकेष्वमल
नृपगुणैरन्वितःकीर्तिधर्मौर्म्मान्धातुर्भूमिपालात्स कलगुणनिधेन्मौर्य वंशोव बभूव ॥ १ ॥[14]
संदर्भ: (1069 ईस्वी, महाराज गोविन्दराज मौर्य का वाघली शिलालेख)
अर्थ: कश्यप पुत्र (विवस्वान) से मनु हुए, जिनसे उज्ज्वल सूर्यवंश चला। उसी वंश में मान्धाता जैसे कीर्तिमान राजा हुए, जिनके गुणों के संग्रह से मौर्य वंश का उद्भव हुआ।

---

[12] महाकवि अश्वघोष, सौन्दरनन्द महाकाव्य, व्याख्याकार: आचार्य जगदीश चन्द्र मिश्र, सुरभारती ग्रन्थमाला 182 (चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन)
[13] द इंडियन हिस्टोरिकल क्वार्टरली (The Indian Historical Quarterly), भाग 13, अंक 1–4 (1937), पृष्ठ 647
[14] एफ. कीलहॉर्न, "वाघली स्टोन इंस्क्रिप्शन ऑफ गोविन्दराज ऑफ शक 991", एपिग्राफिया इण्डिका (Epigraphia Indica Vol.2), भाग 2, सं. जे. बर्गेस (कोलकाता / लंदन: ल्यूज़ैक एंड कंपनी, 1894), पृष्ठ 225

4. **'राजतरंगिणी' और अन्य साहित्यिक साक्ष्य:** कल्हण की 'राजतरंगिणी' में मौर्य सम्राटों को 'महाशाक्य' और इक्ष्वाकु कुल से संबंधित बताया गया है:

महाशाक्यः स नृपतिर्न शक्यो बाधितुं त्वया । तस्मिन्दृष्टे तु कल्याणि भविता ते तमः क्षयः ॥ १४१ ॥
संदर्भ: (राजतरंगिणी - तरंग 1 : 141)
अर्थ: यह राजा (जलौक/अशोक वंशज) 'महाशाक्य' है, इसे बाधित करना संभव नहीं है।

5. **जैन ग्रंथों का समर्थन:** जैन ग्रंथ 'कुमारपाल प्रबंध' में भी मौर्यवंशी राजा चित्रांगद को स्पष्ट रूप से 'रघुवंश' (जो इक्ष्वाकु वंश की ही प्रसिद्ध शाखा है) का कहा गया है। जैन परंपरा में चित्तौड़गढ़ (चित्रकूट) का निर्माण कराने वाले मौर्य राजा चित्रांगद को स्पष्ट रूप से 'रघुवंश' (सूर्यवंश/इक्ष्वाकु वंश) से जोड़ा गया है :[15]

एतदाकर्ण्य प्रमुदितः प्रशंसां कुर्वन् कतिपयैर्दिनैश्चित्रकूटमगमत्। तत्र श्रीशान्तिनाथप्रासादे रामचन्द्रमुनिं ननाम। जातचित्रश्चित्रकूटमूलोत्पत्तिं पप्रच्छ। राममुनिराह- पुरा रघोवंशे चित्राङ्गदो राजाऽभिनवैः फलैः केनापि योगिना व्याघ्रयुक्तेन षण्मासान् सेवितः। राजा कारणं पृष्टः प्राह योगी - द्वात्रिंशल्लक्षणधरस्य तव सांनिध्यान्मम मन्त्रसिद्धिर्भवतु। कानि तानि लक्षणानीति राजा पृष्टः प्राह
संदर्भ: (कुमारपाल प्रबंध, पृष्ठ 59)
अर्थ: यह सुनकर (कुमार) अत्यंत प्रसन्न हुए और उनकी प्रशंसा करते हुए कुछ दिनों में चित्रकूट (चित्तौड़गढ़) पहुँचे। वहाँ श्री शांतिनाथ जिन-मंदिर में उन्होंने रामचन्द्र मुनि को प्रणाम किया। उत्सुक होकर उन्होंने चित्रकूट पर्वत/दुर्ग की मूल उत्पत्ति के बारे में पूछा। रामचन्द्र मुनि ने कहा - प्राचीन काल में रघुवंश (सूर्यवंश) में चित्रांगद नाम के राजा हुए। बाघ (व्याघ्र) के साथ रहने वाले किसी योगी ने विशेष फलों के साथ छह महीने तक उन राजा की सेवा की। जब राजा ने इसका कारण पूछा, तो योगी ने कहा- "बत्तीस (32) शुभ लक्षणों से युक्त आपके सानिध्य से मेरी मंत्र-सिद्धि पूर्ण हो।" राजा द्वारा यह पूछने पर कि "वे लक्षण कौन-कौन से हैं?", योगी ने कहा।

इन प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि मौर्यों का मूल 'शाक्य' कुल है, जो स्वयं इक्ष्वाकु वंशीय क्षत्रियों की एक शाखा थी। मौर्यों द्वारा स्वयं को सूर्यवंशी (आदित्य गोत्र) कहना उनके इसी इक्ष्वाकु-शाक्य मूल की पुष्टि करता है।

---

[15] कुमारपाल प्रबन्ध (Kumarapala Prabandha)। रचयिता: जिनमण्डल गणि। संपादित: मुनि जिनविजय। सिंधी जैन ग्रन्थमाला, ग्रंथांक 13। अहमदाबाद: भारतीय विद्या भवन, 1941

• जैन ग्रंथानुसार

जैन साहित्य और परंपराओं में मौर्यों को निर्विवाद रूप से 'अभिजात क्षत्रिय' (उच्च कुलीन क्षत्रिय) स्वीकार किया गया है। जैन आचार्यों ने न केवल अपनी कथाओं में मौर्यों के राजसी मूल का उल्लेख किया है, बल्कि अपने शब्दकोशों में भी 'मौर्य' शब्द को क्षत्रिय वंश का पर्यायवाची माना है।

इस संदर्भ में प्रमुख जैन साक्ष्य निम्नलिखित हैं:

1. जैन आगम ग्रंथों और सूत्रों का साक्ष्य: जैन धर्म के प्राचीन सूत्रों में सम्राट चंद्रगुप्त को स्पष्ट रूप से उच्च वंश का क्षत्रिय बताया गया है।

- **निशीथ सूत्र:** इस ग्रंथ में चंद्रगुप्त की उच्च कुलीनता का उल्लेख करते हुए उन्हें 'अभिजात क्षत्रिय' कहा गया है:

"चंदगुत्तो मोरपोसगो त्ति जे अभिजाणंति खत्तिया ते तस्स प्राणं परिभवंति।"
संदर्भ: (निशीथ सूत्र : विभाग 4: उद्देशक 16 : सूत्र 5138)
अर्थ: मयूरपोषक चंद्रगुप्त अभिजात क्षत्रिय वर्ग के थे तथा उनके गुरु आचार्य चाणक्य उनके प्राणों की चिंता करते थे।

- **बृहत्कल्प सूत्र:** यह ग्रंथ भी चंद्रगुप्त के क्षत्रियत्व की पुष्टि करता है:

"पाडलिपुते नयरे चंदगुत्तो राया। सो य मोरपोसगपुत्तो ति जे खत्तिया अभिजाणंति।"
संदर्भ: (बृहत्कल्पसूत्र : उद्देश्य 1 : सूत्र 2489)
अर्थ: मयूरपोषक चन्द्रगुप्त पाटलिपुत्र का राजा था और वह अभिजात (उच्चवंशीय) क्षत्रिय था।

2. जैन शब्दकोशों (कोष) में 'मौर्य' की परिभाषा: जैन विद्वानों ने 'मौर्य' शब्द की व्याख्या ही क्षत्रिय वंश के रूप में की है, जो किसी भी प्रकार के शूद्रत्व के संदेह को समाप्त करता है।

- **पाइअ-सद्द-महण्णवो (प्राकृत-शब्द-महाणर्व):** मुरिअ (पुं.) [प्राकृत शब्द] = मौर्य (एक प्रसिद्ध क्षत्रिय वंश / राजा चंद्रगुप्त मौर्य का वंश)।[16]
- **संक्षिप्त प्राकृत-हिन्दी कोष:** "मोरिय पुं [मौर्य] क्षत्रिय वंश। उसमें उत्पन्न।"[17]

3. 'परिशिष्टपर्वण' (आचार्य हेमचंद्र): आचार्य हेमचंद्र रचित 'परिशिष्टपर्वण' में चंद्रगुप्त को 'मयूरपोषक' (मोर पालने वाले) समुदाय के प्रमुख की पुत्री का पुत्र बताया गया है। जैन परंपरा के अनुसार, यह 'मयूरपोषक' समुदाय कोई निम्न जाति नहीं, बल्कि पिप्पलीवन गणराज्य के वे क्षत्रिय थे जिनकी कुल परंपरा में मयूरों का पालन और उन्हें पवित्र मानना सम्मिलित था।

4. 'कुमारपाल प्रबंध' का साक्ष्य: 13वीं शताब्दी के जैनाचार्य सोमप्रभ सूरि ने अपने ग्रंथ में मौर्यों के संबंध में अत्यंत महत्वपूर्ण तथ्य प्रस्तुत किए हैं। वे चित्तौड़ के मौर्य शासक चित्रांगद मौर्य को स्पष्ट रूप से 'रघुवंशी' (सूर्यवंशी) क्षत्रिय कहते हैं: "पुरा रघोवंशे चित्राङ्गदो राजाऽभिनवैः फलैः"। इसी ग्रंथ में 36 क्षत्रिय कुलों की सूची में 'मौर्य' वंश को प्रमुखता से स्थान दिया गया है।

---

[16] पं. हरगोविंददास त्रिकमचंद सेठ, पाइमद्द-सद्द-महण्णवो (प्राकृत-हिंदी कोश), पृष्ठ 764

[17] डॉ. के. आर. चन्द्र (संपा.), संक्षिप्त प्राकृत-हिन्दी कोष, पृष्ठ 666

5. जैन नागखण्ड अभिलेख (श्रवणबेलगोला): दक्षिण भारत से प्राप्त यह जैन शिलालेख मौर्यों के क्षत्रिय धर्म के पालन की पुष्टि करता है:[18]

चन्द्रगुप्तेन सु-क्षात्र धर्मगेहेन धीमता
संदर्भ: (श्रवणबेलगोला, सोराब तालुक अभिलेख संख्या 263)
अर्थ: ज्ञानी सम्राट चंद्रगुप्त द्वारा संरक्षित (नागखंड), जो क्षत्रियत्व/क्षात्र धर्म के भण्डारी थे।

6. जैन धार्मिक परंपरा में सम्मान: जैन धर्म के गणधरों में भी 'मौर्यपुत्र' का नाम गौरव से लिया जाता है, जो पिप्पलीवन के मौर्य कुल से संबंधित थे। जैन साहित्य उन्हें इतना धार्मिक मानता है कि उन्हें 'विप्र' (गुणाधारित व्यवस्था में श्रेष्ठ) तक संबोधित किया गया है, जबकि वे मूलतः मोरिय क्षत्रिय ही थे। भगवान महावीर के 11 मुख्य शिष्य (गणधर) थे, जिनमें से दो गणधरों का संबंध मौर्य कुल से रहा है: मांडितपुत्र (मांडिकपुत्र): इनका संबंध 'मौर्य सन्निवेश' (मयूरपोषक गाँव अर्थात पिप्पलीवन) से माना जाता है। मौर्यपुत्र (मोरियपुत्र): जैन आगम ग्रंथों (जैसे आवश्यकचूर्णि एवं तिलोयपण्णत्ती) के अनुसार, ये दोनों विद्वान क्षत्रीय परंपरा के मौर्य सन्निवेश क्षेत्र के निवासी थे, जिन्होंने महावीर स्वामी का शिष्यत्व स्वीकार कर जैन धर्म के प्रचार में मुख्य भूमिका निभाई।

जैन ग्रंथों का एकस्वर में यह मत है कि मौर्य राजवंश एक प्राचीन और प्रतिष्ठित क्षत्रिय वंश था। उनके लिए प्रयुक्त 'अभिजात क्षत्रिय' और 'रघुवंशी' जैसे शब्द उनकी उच्च सामाजिक और राजनैतिक प्रतिष्ठा के प्रमाण हैं।

[18] Epigraphia Carnatica, volume. 8, Sorab Taluk, inscription. 263, page. 86; translation., p. 46.

• बौध्य ग्रंथानुसार

बौद्ध साहित्य में मौर्य राजवंश की उत्पत्ति और उनके क्षत्रियत्व के विषय में सर्वाधिक विस्तृत और सुसंगत विवरण प्राप्त होते हैं। बौद्ध परंपराओं के अनुसार, मौर्य न केवल क्षत्रिय थे, बल्कि वे उसी शाक्य कुल से संबद्ध थे जिसमें भगवान बुद्ध का जन्म हुआ था। इस संदर्भ में प्रमुख बौद्ध साक्ष्य निम्नलिखित हैं:

1. **'महापरिनिर्वाण सुत्त' का प्राचीनतम साक्ष्य:** बौद्ध धर्म के सबसे प्राचीन ग्रंथों में से एक 'दीघनिकाय' के 'महापरिनिर्वाण सुत्त' में पिप्पलीवन के मौर्यों द्वारा भगवान बुद्ध के अवशेषों पर अधिकार जताने का वर्णन है। उन्होंने अपनी दावेदारी का आधार अपना 'क्षत्रिय' होना बताया था:[19]

अस्सोसुं खो पिप्पलिवनिया मोरिया- 'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो'ति। अथ खो पिप्पलिवनिया मोरिया कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसुं 'भगवापि खत्तियो मयम्पि खत्तिया, मयम्पि अरहाम भगवतो सरीरानं भागं, मयम्पि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्सामा'ति। 'नत्थि भगवतो सरीरानं भागो, विभत्तानि भगवतो सरीरानि। इतो अङ्गारं हरथा'ति। ते ततो अङ्गारं हरिंसु

संदर्भ: (त्रिपिटक: दीघनिकाय: महापरिनिर्वाण सुत्त),

अर्थ: पिप्पलीवन के मौर्यों ने सुना कि भगवान बुद्ध कुशीनगर में परिनिर्वाण को प्राप्त हुए हैं। तब पिप्पलीवन के मौर्यों ने कुशीनगर के मल्ल राजाओं के पास अपना दूत भेजकर कहा: "भगवान बुद्ध भी क्षत्रिय थे और हम भी क्षत्रिय हैं, इसलिए हम भी भगवान के शरीर (अस्थि-अवशेषों) का भाग पाने के अधिकारी हैं। हम भी भगवान के शरीरावशेषों पर एक स्तूप और उत्सव का निर्माण करेंगे। कुशीनगर के मल्लों ने उत्तर दिया: "भगवान के शरीर के अवशेष अब शेष नहीं बचे हैं, उनका विभाजन हो चुका है। आप यहाँ से अंगार (चिता की राख) ले जाएँ।" तब वे वहाँ से अंगार ले गए और उन्होंने पिप्पलीवन में 'अंगार स्तूप' की स्थापना की।

2. **'दिव्यावदान' में स्वयं को क्षत्रिय घोषित करना:** संस्कृत बौद्ध ग्रंथ 'दिव्यावदान' के 'अशोकावदान' और 'कुणालवदान' खंडों में मौर्य सम्राटों द्वारा स्वयं को स्पष्ट रूप से 'क्षत्रिय' कहा गया है।

- **सम्राट बिंदुसार का कथन:** जब चंपा की ब्राह्मणी सुभद्रांगी (अशोक की माता) राजा बिंदुसार के समीप समागम की इच्छा से गई, तब बिंदुसार ने कहा:[20] [21]

त्वं नापिनी अहं राजा क्षत्रियो मूर्धाभिषिक्तः। कथं मया सार्धं समागमो भविष्यति।

संदर्भ: (दिव्यावदान: 26 पांशुप्रदानावदान - 67)

अर्थ: तुम नाईन (नापिनी) हो और मैं 'मूर्धाभिषिक्त क्षत्रिय' राजा हूँ। तुम्हारे साथ मेरा समागम कैसे संभव है? (बाद में उसके ब्राह्मण पुत्री होने की पुष्टि पर ही उन्होंने उसे स्वीकार किया)।

[19] दीघनिकाय: भाग २ (पाळि महावग्गो), संपादक स्वामी द्वारिकादास शास्त्री (वाराणसी: बौद्ध भारती संस्करण), पृष्ठ ४९७ - ४९८

[20] श्यामबिहारी मिश्र एवं शुकदेवबिहारी मिश्र, चंद्रगुप्त मौर्य (लखनऊ: 1952), पृष्ठ 7

[21] डिजिटल संस्कृत बौद्ध कैनन (DSBC) एवं इंटरनेट आर्काइव डिजिटल संग्रह।

- **सम्राट अशोक का कथन:** जब अशोक बीमार हुए और उनकी पत्नी तिष्यरक्षिता ने उन्हें औषधीय रूप में प्याज (पलाण्डु) खाने को कहा, तब अशोक ने उत्तर दिया:[22] [23]

देवि, अहं क्षत्रियः कथं पलाण्डुं परिभक्षयामि।
संदर्भ: (दिव्यावदान: 27 कुणालवदानम् - 116)
अर्थ: देवी, मैं 'क्षत्रिय' हूँ, मैं प्याज कैसे खा सकता हूँ? (प्राचीन काल में क्षत्रियों के लिए प्याज वर्जित माना जाता था)।

3. 'उत्तरविहार-अट्ठकथा' का वंशावली विवरण: थेरा महेंद्र द्वारा रचित इस अट्ठकथा में चंद्रगुप्त मौर्य के पिता और उनके वंश का स्पष्ट उल्लेख है:

मोरिय नगरे चन्दवड्ढनो खत्तिया राजा नाम रज्ज करोति....... चन्द वड्ढनो राजस्स मोरियरञ्ञो सा अहू अग्ग महेसी धम्ममोरिया पुत्ता तस्सासि चन्द्रगुप्तो 'ति ॥ आदिच्चा नाम गोतेन साकिया नाम जातिया ।
संदर्भ: (उत्तरविहार अट्ठकथा : पृष्ठ 1)
अर्थ: मौर्य नगर में चंद्रवर्धन नामक क्षत्रिय राजा राज्य करते थे। उनकी अग्र-महिषी (महारानी) धम्ममोरिया (धर्मादेवी मौर्य) थीं। उनसे चंद्रगुप्त का जन्म हुआ, जो 'आदित्य गोत्र' (सूर्यवंश) और 'शाक्य जाति' के मौर्य क्षत्रिय थे।

4. 'महाबोधिवंश' और 'महावंश' के प्रमाण: इन ग्रंथों में भी चंद्रगुप्त को राजकुल और क्षत्रिय वंश में उत्पन्न बताया गया है:

- **महाबोधिवंश:**[24]

सक्यपुत्तेहि मापिते मोरियनगरे नरिन्दकुलसम्भवो। चन्दगुत्तकुमारो चाणक्कद्विज पतिसमुस्सहितो पाटलिपुट्टे राजा अहोसि।
संदर्भ: (महाबोधिवंश - द्वितीयसंगतिकथा - पृष्ठ 98),
अर्थ: शाक्यों द्वारा निर्मित मौर्य नगर के 'नरेन्द्र कुल' (राजवंश) में उत्पन्न चंद्रगुप्त कुमार, चाणक्य द्विज के सहयोग से पाटलिपुत्र के राजा बने।

- **महावंश:**[25]

मोरियान खत्तियान वसजात सिरीधर। चन्दगुत्तोति पञ्ञात...
संदर्भ: (महावंश: परिच्छेद 5: श्लोक 26)
अर्थ: मौर्य वंश के क्षत्रियों में उत्पन्न श्री चंद्रगुप्त के रूप में विख्यात हुए...।

---

[22] दिव्यावदानम् (कुणालावदानम्), सं. डॉ. परशुराम लक्ष्मण वैद्य, बौद्ध संस्कृत ग्रन्थमाला 20 (दरभंगा: मिथिला विद्यापीठ, 1959), पृष्ठ 264
[23] अशोकावदान, सं. सुजीतकुमार मुखोपाध्याय (नई दिल्ली: साहित्य अकादमी, 1963), पृष्ठ 111
[24] द महा-बोधि-वंस, संपादक एस० आर्थर स्ट्रॉन्ग (लंदन: पालि टेक्स्ट सोसाइटी, हेनरी फ्राउड, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1891), पृष्ठ 98
[25] भदंत महानामा, महावंश, अनुवादक स्वामी द्वारिकादास शास्त्री, संपादक डॉ. परमानन्द सिंह (वाराणसी: महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ संस्करण), पृष्ठ ५६-५७

5. 'आर्य मञ्जुश्रीमूलकल्प' का साक्ष्य: यह ग्रंथ चंद्रगुप्त मौर्य को 'राजकुल' में उत्पन्न और 'धर्मात्मा' राजा बताता है:[26]

जातो राजकुले चन्द्रगुप्तस्य धीमतः ॥
संदर्भ: (आर्य मञ्जुश्रीमूलकल्प : पटलविसर : अध्याय 53 : श्लोक 413)
अर्थ: बुद्धिमान चंद्रगुप्त का जन्म 'राजकुल' (राजपरिवार) में हुआ था।

बौद्ध ग्रंथों के इन प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि मौर्य शासक न केवल क्षत्रिय थे, बल्कि वे बुद्ध के समकालीन शाक्यों की ही एक शाखा 'मोरिय' से संबंधित थे। 'मूर्धाभिषिक्त क्षत्रिय', 'नरेन्द्र कुल' और 'आदित्य गोत्र' जैसे शब्दों का प्रयोग उनकी उच्च कुलीनता की पुष्टि करता है ।

[26] शास्त्री, महामहोपाध्याय टी. गणपति, आर्यमञ्जुश्रीमूलकल्प (Āryamañjuśrīmūlakalpa)। तिरुवनंतपुरम: ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट एंड मैन्यूस्क्रिप्ट्स लाइब्रेरी (ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE AND MANUSCRIPTS LIBRARY), 2008। पृष्ठ 613

• हिन्दू ग्रंथानुसार

प्राचीन हिन्दू ग्रंथों, पुराणों और नीतिशास्त्रों में मौर्य राजवंश को एक प्रतिष्ठित क्षत्रिय कुल के रूप में स्वीकार किया गया है। यद्यपि मध्यकाल के उत्तरार्द्ध में कुछ टीकाकारों ने भ्रामक व्याख्याएँ प्रस्तुत करने का प्रयास किया, परंतु मूल ग्रंथ और प्राचीन टीकाएँ मौर्यों के उच्च कुलीन क्षत्रियत्व की पुष्टि करती हैं। इस विषय में प्रमुख हिन्दू शास्त्रीय प्रमाण निम्नवत हैं:

1. सूर्यवंश (आदित्यवंश) से मूल संबंध: हिन्दू पौराणिक परंपरा में मौर्यों के मूल पूर्वज 'शाक्य' कुल को स्पष्ट रूप से सूर्यवंश (इक्ष्वाकु वंश) की शाखा माना गया है। 'नरसिंह पुराण' के अनुसार, भगवान बुद्ध और उनके पिता शुद्धोदन आदित्यवंश (सूर्यवंश) के क्षत्रिय थे:

वस्त्रपाणेः शुद्धोदनः शुद्धोदनाद्बुधः । बुधादादित्यवंशो निवर्तते ॥ १५ ॥ सूर्यवंशभवा ये ते प्राधान्येन प्रकीर्तिताः । यैरियं पृथिवी भुक्ता धर्मतः क्षत्रियैः पुरा ॥ १६ ॥

संदर्भ: (नरसिंह पुराण: अध्याय 21: श्लोक 15-16)

अर्थ: वस्त्रपाणि से शुद्धोदन और शुद्धोदन से बुध (बुद्ध) की उत्पत्ति हुई। बुद्ध से आदित्यवंश (शाखा रूप में) वर्णित है। सूर्यवंश में उत्पन्न हुए ये क्षत्रिय मुख्य रूप से प्रकीर्तित हैं, जिन्होंने पूर्वकाल में इस पृथ्वी का धर्मपूर्वक पालन किया है।

'भविष्य पुराण' इस तथ्य को और स्पष्ट करते हुए सम्राट चंद्रगुप्त को सीधे 'शाक्य सिंह' (बुद्ध) के वंश से जोड़ता है:[27]

शक्यासिहादुद्धसिंहः पितुरर्द्ध कृतं पदम् ॥ चन्द्रगुप्तस्तस्य सुतः पौरसाधिपतेः सुताम्। सुलूवस्य तथोद्वह्य यावनीबौद्धतत्परः ॥ ४३ ॥ षष्ठिवर्ष कृतं राज्यं बिन्दुसारस्ततोऽभवत्। पितृस्तुल्यं कृतं राज्यमशोकस्तनयोऽभवत् ॥ ४४ ॥

संदर्भ: (भविष्य पुराण - प्रतिसर्ग पर्व 1: अध्याय 6: श्लोक 43-44)

अर्थ: शाक्य सिंह के वंशज भगवान बुद्ध हुए। बुद्ध के वंशज चन्द्रगुप्त हुए, जिन्होंने पौरसाधिपति और सेलुकस (सुलूव) की पुत्री यवनी के साथ पाणिग्रहण किया और साठ वर्ष तक राज्य किया। चन्द्रगुप्त के वंशज बिन्दुसार हुए और बिन्दुसार के वंशज अशोक हुए।

2. राजकुलीनता और चाणक्य द्वारा राज्याभिषेक: प्रमुख वैष्णव पुराणों-विष्णु, भागवत, वायु और ब्रह्मांड में एकमत से यह स्वीकार किया गया है कि मौर्यों का राज्याभिषेक आचार्य चाणक्य द्वारा शास्त्रोक्त विधि से किया गया था। 'विष्णु पुराण' के अनुसार:

ततश्च नव चैतान्नन्दान् कौटिल्यो ब्राह्मणस्समुद्धरिष्यति ॥ २६ ॥ तेषामभावे मौर्याः पृथिवीं भोक्ष्यन्ति ॥ २७ ॥ कौटिल्य एव चन्द्रगुप्तमुत्पन्नं राज्येऽभिषेक्ष्यति ॥ २८ ॥

संदर्भ: (विष्णु पुराण: अंश 4: अध्याय 24: श्लोक 26-28)

अर्थ: उन नौ नन्दों को कौटिल्य नामक ब्राह्मण नष्ट करेगा। उनके अभाव में मौर्य पृथ्वी का भोग करेंगे। वही कौटिल्य चंद्रगुप्त को उत्पन्न (राजकुल में) होने के कारण राज्य के पद पर अभिषिक्त करेगा।

इसी प्रकार 'श्रीमद्भागवत पुराण' मौर्य शासकों के लिए 'नरपति' (मनुष्यों का स्वामी/राजा) शब्द का प्रयोग करता है, जो केवल प्रतिष्ठित क्षत्रिय शासकों के लिए प्रयुक्त होता है:

[27] श्री राम शर्मा आचार्य एवं चमन लाल गौतम, भविष्य पुराण (खण्ड 1), पृष्ठ 334-335.

नव नन्दान्द्विजः कश्चित्प्रपन्नानुद्धरिष्यति । तेषां अभावे जगतीं मौर्या भोक्ष्यन्ति वै कलौ ॥ १२ ॥ स एव चन्द्र गुप्तं वै द्विजो राज्येऽभिषेक्ष्यति । तत्सुतो वारिसारस्तु ततश्चाशोकवर्धनः ॥ १३ ॥
संदर्भ: (भागवत पुराण: स्कंद 12: अध्याय 1: श्लोक 12-13)
अर्थ: एक ब्राह्मण (चाणक्य) नन्दों का नाश कर डालेगा। उनके नाश हो जाने पर कलियुग में मौर्यवंशी नरपति पृथ्वी का राज्य करेंगे। वही ब्राह्मण पहले-पहल चन्द्रगुप्त मौर्य को राजा के पद पर अभिषिक्त करेगा।

3. **'विशाल वंश' और वेदों के ज्ञाता का प्रमाण:** आचार्य चाणक्य के प्रत्यक्ष शिष्य कामन्दक ने अपने ग्रंथ 'नीतिसार' में चंद्रगुप्त मौर्य के कुल और उनकी विद्वत्ता का गौरवपूर्ण वर्णन किया है:

वंशे विशालवंशानां ऋषीणामिव भूयसाम् । अप्रतिग्राहकाणां यो बभूव भुवि विश्रुतः ॥ २ ॥ जातवेदा इवार्चिष्मान्वेदान्वेदविदां वरः । योऽधीतवान्सुचतुरचतुरोऽप्येकवेदवत् ॥ ३ ॥
संदर्भ: (कामन्दक नीतिसार: प्रकरण 1: श्लोक 2-3)
अर्थ: वह (चंद्रगुप्त) उन महान विशाल वंशों (क्षत्रिय कुलों) की गणना में अधिकांश महर्षियों के समान पृथ्वी पर प्रसिद्ध हुए। वे एक वेदी अग्नि के समान प्रकाशमान तेज बुद्धि वाले और वेदों के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ हुए, जिन्होंने वेदों और वेदांगों की विधिवत शिक्षा ग्रहण की थी।

यह प्रमाण अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि प्राचीन भारत में वेदों की शिक्षा प्राप्त करना 'द्विज' (क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य) होने का अनिवार्य प्रमाण था।

4. **शूद्रोत्पत्ति और 'मुरा' कथा का तार्किक खंडन:** मौर्यों को शूद्र या 'मुरा' नामक दासी की संतान बताना ऐतिहासिक और भाषाई दृष्टि से पूर्णतः निराधार है। इसके खंडन के मुख्य आधार निम्नलिखित हैं:

- **टीकाकारों का प्रक्षेप:** विष्णु पुराण के मूल श्लोकों में 'मुरा' का कोई उल्लेख नहीं है। यह भ्रम 18वीं शताब्दी के टीकाकार ढुंढिराज ने उत्पन्न किया था।[28]
- **व्याकरणिक अशुद्धि:** पाणिनीय व्याकरण के नियमों के अनुसार किसी स्त्री-वाचक नाम (जैसे 'मुरा') से संतान या वंश का बोध कराने वाला तद्धित प्रत्यय लगाने पर 'मौरेय' शब्द बनता है, 'मौर्य' नहीं। 18वीं शताब्दी के टीकाकार ढुंढिराज द्वारा 'मुरा' से 'मौर्य' को जोड़ने का प्रयास किया गया, जिसे भाषावैज्ञानिक और व्याकरणिक दृष्टि से अमान्य माना गया है। भाषाविज्ञान के अनुसार प्राकृत के "मुरिअ" और पालि के "मोरिय" (जहाँ 'रिअ' का संस्कृत में 'र्य' होना सामान्य प्रक्रिया है) से ही संस्कृत का 'मौर्य' शब्द निष्पन्न हुआ है।
- **शास्त्रीय परंपरा:** 'मुद्राराक्षस' नाटक में प्रयुक्त 'वृषल' शब्द का अर्थ मध्यकालीन टीकाकारों ने 'शूद्र' कर दिया, जबकि प्राचीन काल में राजकुल के संदर्भ में इसका अर्थ 'वृष' (शक्तिशाली/श्रेष्ठ) होता था।[29] चाणक्य ने चंद्रगुप्त को "विजयतां वृषल:" कहकर संबोधित किया, जिसका अर्थ 'सम्राट की जय हो' है।

हिन्दू शास्त्रों के समग्र विश्लेषण से यह सिद्ध होता है कि मौर्य राजवंश इक्ष्वाकु वंशीय शाक्य क्षत्रियों की एक शाखा थी।, चाणक्य जैसे वेदों के प्रकांड विद्वान द्वारा चंद्रगुप्त का चयन और राज्याभिषेक उनकी उच्च कुलीनता का सबसे प्रबल प्रमाण है, क्योंकि चाणक्य के अनुसार राजा का 'महाकुलीन' होना अनिवार्य था।

---

[28] राधाकुमुद मुखर्जी, चन्द्रगुप्त मौर्य एंड हिज टाइम्स (दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास रिसर्च पब्लिशर्स, 1943), पृष्ठ 11-17
[29] विशाखदत्त प्रणीत, मुद्राराक्षस, संपादक/व्याख्याकार: दिव्या द्विवेदी

❖ प्राचीन लेखानुसार

प्राचीन नीतिशास्त्रों, अर्थशास्त्रीय ग्रंथों और संस्कृत नाटकों में मौर्यों की उत्पत्ति को लेकर जो संकेत मिलते हैं, वे उनके उच्च कुलीन क्षत्रिय होने की निर्विवाद पुष्टि करते हैं। प्राचीन काल में राजा के लिए 'महाकुलीन' होना एक अनिवार्य अर्हता थी, और तत्कालीन विद्वानों ने चंद्रगुप्त मौर्य को इसी श्रेणी में रखा है।
इस संदर्भ में प्रमुख प्राचीन लेखों के साक्ष्य निम्नलिखित हैं:

1. **आचार्य चाणक्य कृत 'अर्थशास्त्र' का मापदण्ड:** मौर्य साम्राज्य के संस्थापक और नीति-निर्धारक आचार्य चाणक्य ने 'अर्थशास्त्र' में एक आदर्श राजा के लिए 'अभिगामिक गुणों' की चर्चा की है, जिसमें 'महाकुलीन' (उच्च कुल में जन्म) होना सर्वोपरि है:

महाकुलीनो दैवबुद्धिसत्त्वसम्पन्नो वृद्धदर्शी धार्मिकः सत्यवाग् अविसंवादकः कृतज्ञः स्थूललक्षो महा उत्साहोऽदीर्घसूत्रः शक्यसामन्तो विनयकाम इत्याभिगामिका गुणाः ॥
संदर्भ: (अर्थशास्त्र - अधिकरण 6: अध्याय 1: श्लोक 3)
अर्थ: राजा के अनिवार्य गुण ये हैं - वह महाकुलीन दैवबुद्धि, धैर्यसम्पण, दूरदर्शी, धार्मिक, सत्यवादी, सत्यप्रतिश, कृतज्ञ, उच्चाभिलाषी, बड़ा उत्साही, शीघ्र कार्य करने वाला समन्तों को वश में करने वाला, दृढबुद्धि गुणसंपन्न परिवार बाला और शास्त्र बुद्धि, राजा के ये गुण अभिगामिक गुण कहलाते हैं।

चूँकि चाणक्य ने स्वयं नन्दों जैसे 'अकुलीन' शासकों का विनाश कर चंद्रगुप्त का राज्याभिषेक किया था, अतः यह स्वतः सिद्ध है कि चंद्रगुप्त उनके द्वारा निर्धारित 'महाकुलीन' होने के कठोर मापदण्ड पर पूर्णतः खरे उतरते थे।

2. **कामन्दक कृत 'नीतिसार' का साक्ष्य:** चाणक्य के प्रत्यक्ष शिष्य कामन्दक ने अपने ग्रंथ 'नीतिसार' में चंद्रगुप्त मौर्य के वंश और उनकी शैक्षणिक योग्यता का अत्यंत स्पष्ट वर्णन किया है:

वंशे विशालवंशानां ऋषीणामिव भूयसाम्। अप्रतिग्राहकाणां यो बभूव भुवि विश्रुतः॥ २ ॥ जातवेदा इवार्चिष्मान्वेदान्वेदविदां वरः। योऽधीतवान्सुचतुरश्चतुरोऽप्येकवेदवत् ॥ ३ ॥
संदर्भ: (कामन्दक नीतिसार: प्रकरण 1: श्लोक 2-3)
अर्थ: वह (चंद्रगुप्त) उन महान विशाल वंशों (क्षत्रिय कुलों) की गणना में अधिकांश ऋषियों के समान पृथ्वी पर विख्यात हुए। वे अग्नि के समान तेजस्वी, वेदों के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ हुए और उन्होंने चारों वेदों का एकवेदी के समान गहन अध्ययन किया था।

प्राचीन भारत में वेदों का अध्ययन केवल 'द्विज' (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) ही कर सकते थे, जो मौर्यों के उच्च कुलीन होने का अकाट्य प्रमाण है।

3. **विशाखदत्त कृत 'मुद्राराक्षस' का विश्लेषण:** गुप्तकालीन सुप्रसिद्ध नाटक 'मुद्राराक्षस' में चंद्रगुप्त के लिए 'वृषल' और 'आर्य' शब्दों का प्रयोग हुआ है। आधुनिक काल में 'वृषल' का अर्थ 'शूद्र' लिया जाने लगा, परंतु नाटक के मूल भाष्यों में इसका अर्थ 'श्रेष्ठ' बताया गया है:

वृषलेन वृषेण राज्ञाम् - राजाओं में वृष (श्रेष्ठ) वृषल कहलाता है।

इसी नाटक में चाणक्य चंद्रगुप्त को राजासन पर देखकर हर्षित होते हुए कहते हैं:
अये, सिंहासनम ध्यास्ते वृषलः। साधु साधु। विजयतां वृषल:!
अर्थ: अहा! सम्राट सिंहासन पर विराजमान हैं। श्रेष्ठ सम्राट की विजय हो!

यदि वृषल का अर्थ शूद्र या नीच होता, तो चाणक्य जैसा कट्टर ब्राह्मण कभी भी चंद्रगुप्त को "साधु साधु" (बहुत अच्छा) कहकर संबोधित नहीं करता।

4. **'आर्य मञ्जुश्रीमूलकल्प' का साक्ष्य:** यह प्राचीन महायान बौद्ध ग्रंथ चंद्रगुप्त मौर्य को स्पष्ट रूप से 'राजकुल' (क्षत्रिय राजवंश) में उत्पन्न बताता है:

स्वर्गलोकात्र्च्यवित्वा तु मनुष्येन्द्रोपपद्यते। जातो राजकुले चन्द्रगुप्तस्य धीमतः ॥
संदर्भ: (आर्य मञ्जुश्रीमूलकल्प : पटलविसर : अध्याय 53 : श्लोक 413)
अर्थ: स्वर्गलोक से आकर मनुष्यों का स्वामी बना वह बुद्धिमान चंद्रगुप्त 'राजकुल' (शाही परिवार) में उत्पन्न हुआ था।

प्राचीन नीतिशास्त्रीय और साहित्यिक लेखों का विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि मौर्य राजवंश न केवल राजनीतिक रूप से शक्तिशाली था, बल्कि सामाजिक और धार्मिक रूप से भी अत्यंत प्रतिष्ठित 'महाकुलीन' क्षत्रिय वंश था। उनके लिए 'विशाल वंश', 'आर्य' और 'वेदविद' जैसे शब्दों का प्रयोग उनके क्षत्रियत्व की ठोस आधारशिला रखता है।

❖ शिलालेख प्रमाणानुसार

प्राचीन भारतीय इतिहास के पुनर्निर्माण में शिलालेखों और अभिलेखों को सर्वाधिक विश्वसनीय और अकाट्य प्रमाण माना जाता है। साहित्यिक साक्ष्यों में समय के साथ प्रक्षेप (मिलावट) की संभावना हो सकती है, किंतु शिलालेख समकालीन सत्य को उद्घाटित करते हैं। मौर्य राजवंश के क्षत्रियत्व, उनकी उच्च कुलीनता और इक्ष्वाकु (सूर्यवंश) से उनके संबंध को पुष्ट करने वाले कई महत्वपूर्ण शिलालेख उपलब्ध हैं।
इस संदर्भ में प्रमुख शिलालेखीय प्रमाण निम्नलिखित हैं:

1. **गोविन्दराज मौर्य का वाघली शिलालेख (1069 ईस्वी):** यह शिलालेख मौर्यों की क्षत्रिय उत्पत्ति का सबसे स्पष्ट और महत्वपूर्ण प्रमाण है। महाराष्ट्र के खानदेश क्षेत्र (वाघली) से प्राप्त यह अभिलेख मौर्यों की वंशावली को सीधे सूर्यवंश और चक्रवर्ती सम्राट मान्धाता से जोड़ता है:[30]

"सुतः कश्यपोभू - तदनु मनुरभूत्तद्युतात्सूर्यवंशः। विख्यातः सर्वलोकेष्वमल नृपगुणैरन्वितःकीर्तिधर्मैर्म्मान्धातुर्भूमिपालात्स कलगुणनिधेन्मौर्य वंशोव बभूव ॥ १ ॥"
संदर्भः (1069 ईस्वी, महाराज गोविन्दराज मौर्य का वाघली शिलालेख)
अर्थः कश्यप पुत्र (विवस्वान) के पश्चात मनु हुए, जिनसे उज्ज्वल सूर्यवंश प्रकट हुआ। वह वंश संपूर्ण लोकों में अपने शुद्ध नृप गुणों, कीर्ति और धर्म के लिए विख्यात है। उसी वंश में गुणों के संग्रह स्वरूप भूमिपाल (राजा) मान्धाता हुए, जिनसे मौर्य वंश का उद्भव हुआ।

यह शिलालेख सिद्ध करता है कि मध्यकाल तक मौर्य शासक स्वयं को इक्ष्वाकु वंशीय मान्धाता के वंशज और सूर्यवंशी क्षत्रिय मानते थे।

2. **जैन नागखण्ड शिलालेख (अभिलेख संख्या 263, श्रवणबेलगोला):** दक्षिण भारत के कर्नाटक क्षेत्र से प्राप्त यह शिलालेख सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य को 'क्षत्रिय गुणों' का संरक्षक और भण्डारी बताता है। यह प्रमाण मौर्यों के क्षत्रिय धर्म के पालन की पुष्टि करता है:[31]

"द्विपे जम्बूमति क्षेत्रे भारते श्रीधरावुते्। चन्द्रगुप्तेन सु क्षात्र धर्मगेभेन धिमता ॥"
संदर्भः (सोराब तालुक : अभिलेख संख्या 263)
अर्थः जम्बुद्वीप के भारत-क्षेत्र में, पवित्र श्रीधर पर्वत के समीप, ज्ञानी सम्राट चंद्रगुप्त द्वारा संरक्षित यह स्थान है, जो श्रेष्ठ क्षत्रियों के धर्म (क्षत्रियत्व) के गुणों के भण्डारी थे।

3. **मथुरा का खंडित मौर्य शिलालेख (7वीं-8वीं शताब्दी):** मथुरा से प्राप्त यह अभिलेख मौर्यों की एक शाखा का विवरण देता है और वहाँ के एक प्रांतीय सातवी सदी के मौर्य शासक चंद्रगुप्त के पुत्र का नाम 'आर्यराज' था। इसमें मौर्य राजा कृष्णराज और उनके वंशज डिंडीराज का उल्लेख है:[32]

"मौर्य-नृपान्वये नृपतिः श्री कृष्णराजो आर्यराज-नृपतिः श्रीचन्द्रगुप्तात्म तु डिंडीराज इति..."
संदर्भः (मथुरा मौर्य शिलालेख)
अर्थः मौर्य राजवंश में राजा श्रीकृष्णराज हुए; उनके वंश में राजा आर्यराज हुए, तथा श्री चंद्रगुप्त के आत्मज (पुत्र) डिंडीराज हुए।

यहाँ मौर्य राजाओ द्वारा 'आर्यराज' जैसे नामों का प्रयोग मौर्यों की राजकुलीनता और क्षत्रिय पहचान को सुदृढ़ करता है।

---

[30] Epigraphia Indica, खंड 2 (Volume II), पृष्ठ 221-228
[31] Epigraphia Carnatica, Volume. 8, Sorab Taluk, inscription. 263, पृष्ठ. 86; translation., पृष्ठ. 46.
[32] EPIGRAPHIA INDICA, Volume XXXII (1957-58), Pg.210

4. **सम्राट अशोक का ब्रह्मगिरि लघु शिलालेख:** सम्राट अशोक ने अपने अभिलेखों में राजपरिवार के राजकुमारों के लिए 'आर्यपुत्र' (अयपुत) शब्द का प्रयोग किया है। ऐतिहासिक रूप से 'आर्यपुत्र' शब्द का प्रयोग केवल उच्च कुलीन क्षत्रिय राजकुमारों के लिए ही किया जाता था:

"सुवंणगिरीते अयपुतस महामाताणं च वचनेन इसिलसि महामाता आरोगियं वतविया..."
संदर्भ: (ब्रह्मगिरि लघु शिलालेख, पंक्ति 1)
अर्थ: सुवर्णगिरि से आर्यपुत्र (राजकुमार) और महामात्रों की आज्ञा से इषिला के महामात्यों का स्वास्थ्य समाचार पूछा जाना चाहिए।

5. **रुद्रदामन का जूनागढ़ शिलालेख (150 ईस्वी):** यह शिलालेख मौर्यों की प्रशासनिक व्यवस्था और उनके द्वारा नियुक्त अधिकारियों का विवरण देता है। इसमें चंद्रगुप्त और अशोक दोनों को 'मौर्य' सम्राट के रूप में उल्लेखित किया गया है:

"...मौर्यस्य राज्ञः चन्द्रगुप्तस्य राष्ट्रियेण वैश्येन पुष्यगुप्तेन कारितं अशोकस्य मौर्यस्य कृते..."
संदर्भ: (रुद्रदामन का जूनागढ़ शिलालेख)
अर्थ: मौर्य राजा चंद्रगुप्त के प्रांतीय राज्यपाल (राष्ट्रिय) पुष्यगुप्त द्वारा निर्मित (सुदर्शन झील) और मौर्य शासक अशोक के समय यवनराज तुषास्फ द्वारा पुनर्निर्मित।

6. **गोवा के मौर्य राजाओं के ताम्रपत्र (6ठी-7वीं शताब्दी):** गोवा से प्राप्त अनिर्जितवर्मन और चंद्रवर्मन मौर्य के ताम्रपत्रों में उन्हें 'महाराज' और 'धर्म महाराज' संबोधित किया गया है, जो उनके स्वतंत्र क्षत्रिय शासक होने का प्रमाण है:[33]

"...मौर्य महाराजस्य श्रीमद् अनिर्जितवर्मनों वचनात..."
संदर्भ: (अनिर्जितवर्मन का बंदोरा ताम्रपत्र अभिलेख)
इसी प्रकार चंद्रवर्मन के अभिलेख में उन्हें 'मौर्य धर्म महाराज' कहा गया है, जो उनके शासन के नैतिक और क्षत्रिय आधार को दर्शाता है।

7. **राजस्थान के मौर्य शिलालेख (कंसवा और डबोक):** राजस्थान के कोटा और मेवाड़ क्षेत्र से प्राप्त शिलालेख मौर्य राजा धवल और धनिका का उल्लेख करते हैं। कंसवा शिलालेख (738 ईस्वी) में उन्हें मौर्य वंश का प्रतापी राजा बताया गया है: **संदर्भ:** (कंसवा शिलालेख, कोटा, 738 ईस्वी)

ये शिलालेख प्रमाणित करते हैं कि मगध साम्राज्य के पतन के बाद भी मौर्यों की विभिन्न शाखाएँ राजस्थान और मालवा में स्वतंत्र 'महाराजाधिराज' के रूप में शासन कर रही थीं।

शिलालेखीय साक्ष्यों का यह संकलन प्रमाणित करता है कि मौर्य राजवंश प्राचीन काल से लेकर मध्यकाल तक भारत के विभिन्न भागों में एक प्रतिष्ठित क्षत्रिय वंश के रूप में मान्य था। 'सूर्यवंश', 'इक्ष्वाकु', 'आर्यपुत्र', 'क्षत्रिय धर्म' और 'महाराज' जैसे अभिलेखीय विशेषण उनके शूद्रोत्पत्ति के मिथक का पूर्णतः खंडन करते हैं।

[33] Epigraphia Indica, Volume. 33, Issue no. 54, page. 293–296 (Bandora Plates of Maurya Anirjitavarman).

❖ इतिहासकार मतानुसार

मौर्य राजवंश की उत्पत्ति का प्रश्न आधुनिक इतिहासकारों के मध्य व्यापक विमर्श का विषय रहा है। यद्यपि 18वीं और 19वीं शताब्दी के कुछ औपनिवेशिक कालीन विद्वानों ने पुराणों की परवर्ती टीकाओं के आधार पर मौर्यों को शूद्र सिद्ध करने का प्रयास किया था, किंतु 20वीं शताब्दी के राष्ट्रवादी और वैज्ञानिक शोध प्रवृत्तियों वाले इतिहासकारों ने ठोस साहित्यिक, भाषाई और पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर इस मत का खंडन किया है। आधुनिक शोधकर्ताओं का बहुमत अब मौर्यों को 'अभिजात क्षत्रिय' स्वीकार करता है।

विभिन्न प्रमुख इतिहासकारों के शोधपूर्ण मत निम्नलिखित हैं:

1. डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी (Dr. Radha Kumud Mookerji): डॉ. मुखर्जी ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'चंद्रगुप्त मौर्य और उनका काल' (Chandragupta Maurya and His Times) में मौर्यों के क्षत्रियत्व का पुरजोर समर्थन किया है। उन्होंने 'मुरा' नामक दासी की कथा को पूरी तरह काल्पनिक बताया है।

- **तर्क:** डॉ. मुखर्जी का तर्क है कि 'मौर्य' शब्द की व्युत्पत्ति 'मुरा' से होना व्याकरण सम्मत नहीं है। वे बौद्ध साक्ष्यों को अधिक प्राचीन और विश्वसनीय मानते हुए यह निष्कर्ष देते हैं कि मौर्य 'पिप्पलीवन' के मोरिय क्षत्रिय थे, जो शाक्य वंश की ही एक शाखा थी।

2. डॉ. हेमचंद्र रायचौधरी (Dr. H.C. Raychaudhuri): डॉ. रायचौधरी ने अपनी पुस्तक 'प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास' (Political History of Ancient India) में इस विषय का गहन विश्लेषण किया है।

- **तर्क:** वे स्पष्ट करते हैं कि ग्रीक इतिहासकारों (जैसे जस्टिन) द्वारा चंद्रगुप्त के लिए प्रयुक्त 'Humble Origin' का अर्थ 'नीच जाति' नहीं, बल्कि 'विपन्न अवस्था' या 'साधारण स्थिति' है। उनके अनुसार, पिप्पलीवन के विनाश के बाद चंद्रगुप्त का परिवार संकट में था, जिसके कारण उन्हें एक गड़रिये के पास शरण लेनी पड़ी, किंतु वे मूलतः उसी राजकुल से थे जो शाक्य वंश से संबंधित था।

3. डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल (K.P. Jayaswal): डॉ. जायसवाल ने 'मुद्राराक्षस' नाटक में प्रयुक्त 'वृषल' शब्द की ऐतिहासिक व्याख्या की है।

- **तर्क:** उन्होंने प्रमाणित किया कि 'वृषल' शब्द का प्रयोग चाणक्य ने चंद्रगुप्त के लिए तिरस्कार स्वरूप नहीं, बल्कि स्नेह और 'राजाओं में श्रेष्ठ' (वृष) के रूप में किया है। जायसवाल का मत है कि चाणक्य जैसा वेदों का कट्टर समर्थक कभी भी एक शूद्र का राज्याभिषेक नहीं करता, क्योंकि स्वयं चाणक्य के 'अर्थशास्त्र' में राजा का 'महाकुलीन' होना अनिवार्य माना गया है।

4. डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी (Dr. R.S. Tripathi): डॉ. त्रिपाठी ने भी अपनी पुस्तक 'History of Ancient India' में मौर्यों की शूद्रोत्पत्ति का खंडन किया है।

- **तर्क:** वे लिखते हैं कि 'मुरा' की कथा बहुत बाद की गढ़ी हुई बात है, जिसका उल्लेख प्राचीन विष्णु पुराण के मूल पाठ में नहीं मिलता। उन्होंने मौर्यों की उत्पत्ति को नेपाल की तराई में स्थित पिप्पलीवन के क्षत्रिय गणराज्य से जोड़ा है। कुछ इतिहासकर इसे गोरखपुर के आसपास के छेत्र में बसा बताते है ।

5. डॉ. दिनेशचंद्र सरकार (D.C. Sircar): डॉ. सरकार ने शिलालेखों के आधार पर मौर्यों की क्षत्रिय पहचान को पुष्ट किया है।

- **तर्क:** मथुरा और गोवा से प्राप्त मौर्य अभिलेखों का विश्लेषण करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया है कि ये राजा स्वयं को 'मौर्य-नृपान्वये' (मौर्य राजवंश के राजा) और 'महाराज' कहते थे। उन्होंने वाघली शिलालेख के आधार पर मौर्यों के सूर्यवंशी होने के दावे को ऐतिहासिक निरंतरता के रूप में स्वीकार किया है।

6. डॉ. बुद्ध प्रकाश (Dr. Buddha Prakash): डॉ. बुद्ध प्रकाश ने 'चंद्रगुप्त मौर्य' पर अपने शोध में यह मत व्यक्त किया है कि मौर्य शब्द का संबंध उत्तर-पश्चिमी भारत के 'मोरिय' नामक वीर समुदाय से भी हो सकता है, जिन्हें ईरानी और ग्रीक स्रोतों में योद्धा वर्ग के रूप में जाना जाता था। उन्होंने भी उन्हें क्षत्रिय वर्ण के अंतर्गत ही रखा है।

7. डॉ. भंडारकर (Dr. D.R. Bhandarkar): डॉ. भंडारकर ने डबोक और कंसवा शिलालेखों का अध्ययन कर यह सिद्ध किया कि मगध के पतन के बाद भी मौर्यों की शाखाएँ 'परमभट्टारक महाराजाधिराज' जैसी उपाधियाँ धारण करती थीं, जो केवल क्षत्रिय शासकों के लिए ही संभव थीं।

आधुनिक इतिहासकारों का निष्कर्ष यह है कि मौर्यों की शूद्रोत्पत्ति की कथा ब्राह्मणवादी प्रतिक्रियावादी लेखकों द्वारा बहुत बाद में (विशेषकर 18वीं शताब्दी में) गढ़ी गई थी। प्राचीनतम और समकालीन स्रोत (बौद्ध, जैन और शिलालेख) एकमत से उन्हें शाक्य वंशीय क्षत्रिय मानते हैं।

❖ मध्यकालीन लेखानुसार

प्राचीन मौर्य साम्राज्य के पतन के उपरांत भी मौर्यों की विभिन्न शाखाएँ भारत के विभिन्न प्रदेशों, विशेषकर राजस्थान, मालवा और कोंकण में स्वतंत्र अथवा सामंत शासकों के रूप में शासन करती रहीं। मध्यकालीन साहित्य, ख्यात ग्रंथ, रासो काव्य और प्रबंध ग्रंथों में मौर्यों (मोरियों) को निर्विवाद रूप से 'क्षत्रिय' और 'रघुवंशी' (सूर्यवंशी) के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। मध्यकालीन चारण साहित्यों और ऐतिहासिक ग्रंथों के साक्ष्य मौर्यों की उच्च कुलीनता को पुनः प्रमाणित करते हैं।

इस संदर्भ में प्रमुख मध्यकालीन साक्ष्य निम्नवत हैं:

1. जैनाचार्य कृत 'कुमारपाल प्रबंध' का साक्ष्य: 13वीं शताब्दी के प्रसिद्ध विद्वान जैनाचार्य सोमप्रभ सूरि ने 'कुमारपाल प्रबंध' (और 'कुमारपाल प्रतिबोध') में चित्तौड़गढ़ के संस्थापक राजा चित्रांगद मौर्य का उल्लेख किया है। वे उन्हें स्पष्ट रूप से 'रघुवंशी' क्षत्रिय बताते हैं:

"पुरा रघोवंशे चित्राङ्गदो राजाऽभिनवैः फलैः"
संदर्भ: (कुमारपाल प्रबंध, पृष्ठ 59)
अर्थ: प्राचीन काल में रघुवंश में राजा चित्रांगद हुए।

इसी ग्रंथ में चित्रांगद के पुत्र 'वराहगुप्त' को भी रघुवंश का रत्न (मौक्तिक) और राजर्षि पुत्र कहा गया है:

"ततः श्रीरघुवंशमौक्तिकश्रीकीर्त्तिधरराजर्षिपुत्रस्य (वराहगुप्तस्य)..."

2. 'राजप्रशस्ति' शिलालेख (17वीं शताब्दी): मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के समय लिखित 'राजप्रशस्ति' महाकाव्य के शिलालेख (सर्ग 3, श्लोक 18) में उल्लेख है कि गुहिल वंश के संस्थापक बप्पा रावल ने 'मान मोरी' (मनुराज) नामक मौर्य राजा को पराजित कर चित्तौड़ प्राप्त किया था। इसमें मौर्यों को स्पष्ट रूप से 'भूप' (राजा) और एक प्रतिष्ठित 'जाति' (वंश) के रूप में स्वीकारा गया है:

"ततः स निर्जित्य नृपं तु मोरी जातीयभूपं मनुराजसंज्ञम्। गृहीतवांश्चित्रितचित्तकूटं चक्रेऽत्र राज्यं नृप चक्रवर्ती ॥"
संदर्भ: (राजप्रशस्ति शिलालेख, सर्ग 3, श्लोक 18)
अर्थ: तब उस नृप चक्रवर्ती (बप्पा रावल) ने मनुराज नामक मोरी जातीय राजा को जीतकर सुसज्जित चित्रकूट (चित्तौड़) को ग्रहण किया और वहाँ अपना राज्य स्थापित किया।

3. 'राजविलास' महाकाव्य का प्रमाण: मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के दरबारी कवि 'मान' ने अपने ग्रंथ 'राजविलास' में चित्रांगद मौर्य की वीरता और उनके सूर्यवंश (रघुवंश) से संबंध का गौरवगान किया है:

"चित्रकोट गढ़ चारु, मंडि चित्रांगद मोरिय। रघू करत तहँ राज, ढाहि अरिजन ढंढोरिय ॥"
संदर्भ: (राजविलास, पृष्ठ 18)
अर्थ: सुंदर चित्तौड़गढ़ के दुर्ग का निर्माण चित्रांगद मौर्य ने किया। वे वहाँ रघुवंशी (सूर्यवंशी) राजा के रूप में राज्य करते थे और शत्रुओं का दमन करते थे।

4. 'बाँकीदास री ख्यात' का साक्ष्य: जोधपुर नरेश मानसिंह के राजकवि और प्रख्यात विद्वान बाँकीदास (1771-1833 ई.) ने अपनी 'ख्यात' में मौर्यों की उत्पत्ति इंद्र (इक्ष्वाकु परंपरा के संदर्भ में) से बताई है और उनके द्वारा चित्तौड़ बसाने का उल्लेख किया है:

"मोरी वस इद्रसू प्रगट हुवो चित्राग मोरी चित्तोड किलो करायो। सीसोदियै रावळ वापै मोरिया कनैसू चित्तोड लियो जद मोरी भाज सोरठ देमनू गया ॥"

संदर्भ: (बाँकीदास री ख्यात - गहलोतां री वातां: 957)

अर्थ: मोरी वंश इंद्र (सूर्यवंश के प्रतीक स्वरूप) से प्रकट हुआ। चित्रांग मौर्य ने चित्तौड़ का किला बनवाया। सिसोदिया रावल बप्पा ने मौर्यों से चित्तौड़ लिया, तब मोरी वहां से पलायन कर सोरठ (सौराष्ट्र) की ओर चले गए।

5. 'मुहता नैणसी री ख्यात' और क्षत्रिय सूचियाँ: 17वीं शताब्दी के विख्यात इतिहासकार मुहता नैणसी ने मौर्यों को राजपूतों के 36 कुलों की प्रामाणिक सूची में सम्मिलित किया है। उन्होंने भी चित्रांगद मोरी को चित्तौड़ का निर्माता और एक शक्तिशाली क्षत्रिय शासक माना है।

6. 'पृथ्वीराज रासो' में मौर्य सामंतों का उल्लेख: महाकवि चंदबरदाई ने 'पृथ्वीराज रासो' में सम्राट पृथ्वीराज चौहान के सामंतों और जागीरदारों की सूची में मौर्यवंशी राजाओं के नाम गौरव के साथ लिए हैं:

"भीमसिंह मौर्य, सरनसिंह मौर्य, मुकुंदराय मौर्य और मदलराय मौर्य।" यह प्रमाण दर्शाता है कि 12वीं-13वीं शताब्दी तक मौर्य एक प्रतिष्ठित योद्धा वर्ग और भूमिपति के रूप में मान्य थे।

7. परमार-मौर्य संबंध (मेरुतुंग कृत 'स्थिरावली'): 13वीं शताब्दी में मेरुतुंग ने 'स्थिरावली' नामक ग्रंथ की रचना की, जिसमें उन्होंने सम्राट विक्रमादित्य के पिता गंधर्वसेन को मौर्य सम्राट संप्रति का पौत्र बताया है:

"उज्जैन के सम्राट गंधर्वसेन को जो विक्रमादित्य परमार के पिता थे, उन्हें मौर्य सम्राट सम्प्रति का पौत्र लिखा है।" यह मध्यकालीन धारणा मौर्यों और परमारों के रक्त-संबंध और उनकी साझा क्षत्रिय विरासत की पुष्टि करती है।

8. 'एकलिंग महात्म्य' का प्रमाण: 15वीं शताब्दी के ग्रंथ 'एकलिंग महात्म्य' में मेवाड़ के राणा राहप के अधीन सेवा करने वाले सामंत कुलों की सूची में 'मौरिक' (मौर्य) वंश का उल्लेख मिलता है:

"यादव-सैन्धव-दार्भिक-मौरिक-चौलुक्य-चाहुमानामानाख्यः..."

यह सिद्ध करता है कि मौर्य मध्यकाल में भी एक सक्रिय राजनैतिक शक्ति थे।

मध्यकालीन साहित्यों, ख्यातों और शिलालेखों का विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि मध्यकाल के कवियों और इतिहासकारों की दृष्टि में मौर्य कभी भी शूद्र नहीं थे। उन्हें 'रघुवंशी', 'आदित्यवंशी' और '36 क्षत्रिय कुलों' का हिस्सा माना गया। चित्रांगद मोरी और मान मोरी जैसे शासकों का इतिहास मौर्यों के अटूट क्षत्रिय गौरव का प्रतीक है।

❖ मौर्य शुद्रोत्पत्ति खंडन

मौर्य राजवंश को 'शूद्र' अथवा 'अकुलीन' सिद्ध करने के प्रयास केवल मध्यकालीन टीकाओं और कथा-साहित्यों तक सीमित हैं। प्राचीनतम साहित्यिक, पुरातात्विक और समकालीन विदेशी साक्ष्य एक स्वर में इस मत का खंडन करते हैं। इस खंडन के मुख्य स्तंभ निम्नलिखित हैं:

1. यूनानी (ग्रीक) साक्ष्यों का गहन विश्लेषण और पूर्ण उद्धरण: यूनानी इतिहासकार चंद्रगुप्त मौर्य के समकालीन थे। उनके विवरणों में नंदों को स्पष्ट रूप से 'नीच कुल' का कहा गया है, जबकि चंद्रगुप्त को एक 'महत्वाकांक्षी कुलीन योद्धा' के रूप में चित्रित किया गया है।

- **प्लूटार्क (Plutarch) का साक्ष्य:** प्लूटार्क अपनी पुस्तक *'Life of Alexander'* में चंद्रगुप्त और सिकंदर की भेंट का वर्णन करते हुए लिखता है कि चंद्रगुप्त ने स्वयं नंद राजा के नीच जन्म का उपहास किया था:

"Androcottus (Chandragupta) himself, who was then but a youth, saw Alexander himself, and afterwards used to declare that Alexander could easily have taken possession of the whole country, since the king (Dhana Nanda) was hated and despised on account of his baseness and low birth.",

हिन्दी अनुवाद: एंड्रोकोट्टस (चंद्रगुप्त), जो उस समय युवा थे, सिकंदर से मिले और बाद में कहा करते थे कि सिकंदर आसानी से पूरे देश पर अधिकार कर सकता था, क्योंकि यहाँ का राजा (धनानंद) अपने नीच जन्म और दुष्ट स्वभाव के कारण घृणा और अपमान का पात्र था।

तर्क: यदि चंद्रगुप्त स्वयं शूद्र होते, तो वे सिकंदर के सामने धनानंद को 'नीच कुल' (Low birth) का कहकर कभी संबोधित नहीं करते।

- **जस्टिन (Justin) का 'Humble Life' संदर्भ:** जस्टिन ने चंद्रगुप्त के लिए 'Humble Life' शब्द का प्रयोग किया है, जिसका अर्थ कुछ अकुशल अनुवादकों ने 'नीच जाति' लगा लिया, जो कि पूर्णतः त्रुटिपूर्ण है:

"Sandrocottus (Chandragupta) was the leader who achieved his freedom. He was born in humble life but was prompted to aspire to royalty by an omen."

हिन्दी अनुवाद: सैंड्रोकोट्टस (चंद्रगुप्त) वह नेता था जिसने अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की। वह एक **विपन्न अवस्था (Humble life)** में जन्मा था, परंतु एक शकुन (दैवीय संकेत) ने उसे राजपद की आकांक्षा करने के लिए प्रेरित किया।

तर्क: यहाँ 'Humble Life' का अर्थ उनकी तत्कालीन आर्थिक विपन्नता से है, क्योंकि उनके पैतृक गणराज्य पिप्पलीवन के विनाश के बाद उनकी माता ने उन्हें एक गड़रिये को बेच दिया था। यह उनकी 'अवस्था' थी, 'जाति' नहीं। जैसे राजा हरिश्चंद्र दास बने थे, वैसे ही चंद्रगुप्त की स्थिति थी।

- **डायोडोरस (Diodorus) और कर्टियस (Curtius) के प्रमाण:** ये इतिहासकार निर्विवाद रूप से पुष्टि करते हैं कि शूद्रत्व का कलंक केवल नंदों पर था:

Diodorus (Ch. 94): "Porus informed Alexander that the king of Gangaridai (the Nanda King) was a man of quite worthless character, and held in no respect, as he was thought to be son of a barber."

Curtius: "Porus reported that the present king of Magadha (Dhana Nanda) was not merely a man originally of no distinction. His father was in fact a barber... and encompassed the assassination of King (Shishunaga)."

कर्टियस ने सिन्धु की दक्षिणी उपत्यका के पाटलीन (पाटल) राज्य के दो राजाओं में एक का उल्लेख 'मोएरिस' नाम से किया है। आर० के० मुखर्जी का (चन्द्रगुप्त मौर्य और उसका काल, पृ० 35) सुझाव है कि यह नाम 'मोरिय' का यूनानी रूपान्तर है।[34]

समस्त ग्रीक इतिहासकार नंदों को नाई का पुत्र और नीच कहते हैं, परंतु चंद्रगुप्त को नहीं।

2. 'मुरा' कथा का व्याकरणिक एवं ऐतिहासिक विभ्रम: मौर्यों को 'मुरा' नामक दासी की संतान बताना भाषाई दृष्टि से असंभव है।

- **व्याकरणिक तर्क:** इतिहासकर सी० डी० चटर्जी तथा रा० कु० मुखर्जी ने स्पष्ट किया है कि व्याकरण की दृष्टि से 'मुरा' शब्द से 'मौर्य' शब्द की उत्पत्ति मानना अशुद्ध है। संस्कृत व्याकरण के नियमों के अनुसार, यदि कोई शब्द 'मुरा' से व्युत्पन्न होता है, तो वह 'मौर्य' न होकर 'मौरेय' होगा। वास्तव में 'मौर्य' शब्द केवल पुल्लिंग शब्द 'मुर' से ही बन सकता है, जिसका उल्लेख महर्षि पाणिनि के 'गणपाठ' (4.1.151) में एक गोत्र के रूप में किया गया है। अतः 'विष्णु-पुराण' के टीकाकार रत्नगर्भ द्वारा चन्द्रगुप्त को 'मुरा का पुत्र' बताकर 'मौर्य' शब्द की जो व्याख्या की गई है, वह व्याकरणिक आधार पर पूरी तरह गलत है। संस्कृत व्याकरण (पाणिनीय अष्टाध्यायी) के अनुसार, यदि 'मुरा' शब्द से वंश का नाम लिया जाए, तो वह **'मौरेय'** बनेगा। 'मौर्य' शब्द की व्युत्पत्ति केवल 'मोरिय' (मयूरपोषक) से ही संभव है।[35]
- **ऐतिहासिक साक्ष्य:** 18वीं शताब्दी के टीकाकार ढुंढिराज ने सर्वप्रथम 'मुद्राराक्षस' पर भाष्य करते समय 'मुरा' की कथा गढ़ी थी।, इससे पूर्व के किसी भी प्रामाणिक बौद्ध (जैसे *उत्तरविहार-अट्ठकथा*) या जैन ग्रंथों में 'मुरा' का नाम तक नहीं मिलता। बौद्ध ग्रंथों में उनकी माता का नाम **'धर्मादेवी'** (धम्ममोरिया) स्पष्ट रूप से अंकित है।

---

[34] नन्द-मौर्य साम्राज्य का इतिहास, एस.आर. गोयल, पृष्ठ संख्या: 96

[35] नन्द-मौर्य साम्राज्य का इतिहास, एस.आर. गोयल, पृष्ठ संख्या: 90

3. विष्णु पुराण के मूल पाठ का विश्लेषण: अक्सर शूद्रोत्पत्ति के लिए विष्णु पुराण का हवाला दिया जाता है, परंतु उसके मूल श्लोक कुछ और ही कहते हैं:

"ततश्च नव चैतान्नन्दान् कौटिल्यो ब्राह्मणस्समुद्धरिष्यति ॥ २६ ॥ तेषामभावे मौर्याः पृथिवीं भोक्ष्यन्ति ॥ २७ ॥ कौटिल्य एव चन्द्रगुप्तमुत्पन्नं राज्येऽभिषेक्ष्यति ॥ २८ ॥"

संदर्भ: (विष्णुपुराण अंश 4, अध्याय 24, श्लोक 26-28)

तर्क: यहाँ शब्द प्रयुक्त हुआ है **'चन्द्रगुप्तमुत्पन्नं'**। कुछ टीकाकारों ने जानबूझकर इसका अर्थ 'मुरा से उत्पन्न' निकाला, जबकि इसका सही अर्थ 'राजकुल में उत्पन्न' (High born) है। यही शब्द गुप्त वंश के सम्राटों के लिए भी प्रयुक्त हुआ है, जैसे *"कुमारदेव्यामुत्पन्नस्य"*, जिसका अर्थ है 'कुमारदेवी से उत्पन्न'। अतः मौर्यों को शूद्र कहना केवल अनुवाद की धूर्तता है।

4. 'वृषल' शब्द की शास्त्रीय मीमांसा: 'मुद्राराक्षस' नाटक में चाणक्य द्वारा चंद्रगुप्त को 'वृषल' कहना उनके प्रेम का सूचक है। नाटक में ही इसका अर्थ स्पष्ट किया गया है:

"वृषलेन वृषेण राज्ञाम् - राजाओं में वृष (श्रेष्ठ/शक्तिशाली) वृषल कहलाता है।", चाणक्य जैसा कट्टर ब्राह्मण, जो नंदों के शूद्रत्व के कारण ही उनका समूल नाश कर चुका था, कभी भी एक शूद्र को राजा बनाकर "साधु साधु" (बहुत अच्छा) और "विजयतां वृषलः" (सम्राट की जय हो) नहीं कहता।

5. कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' का नीतिगत मापदंड: चाणक्य के अनुसार राजा का **'महाकुलीन'** होना अनिवार्य है:

"महाकुलीनो दैवबुद्धिसत्त्वसम्पन्नो... इत्याभिगामिका गुणाः"

संदर्भ : (अर्थशास्त्र 6:1:3)

चाणक्य ने चंद्रगुप्त को स्वयं तक्षशिला में शिक्षा दी और उनका उपनयन संस्कार करवाकर उन्हें वेदों का ज्ञाता बनाया।, वेदों का अध्ययन केवल 'द्विज' (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) ही कर सकते थे। अतः चंद्रगुप्त का 'वेदविदां वरः' (वेदों के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ) होना उनके क्षत्रियत्व का अकाट्य प्रमाण है।

❖ मौर्य प्रतीक

मौर्य राजवंश के प्रतीक के रूप में 'मयूर' (मोर) की स्वीकार्यता एक ऐसा विषय है जिस पर न केवल **डॉ. श्रीराम गोयल** और **सत्यकेतु विद्यालंकार** सहमत हैं, बल्कि विश्व भर के कई प्रतिष्ठित इतिहासकारों और पुरातत्वविदों ने भी ठोस साक्ष्यों के आधार पर इसे मान्यता दी है।

नीचे इन दोनों पुस्तकों के गहन विश्लेषण और अन्य ऐतिहासिक संदर्भों के आधार पर विस्तृत उत्तर दिया गया है:

1. पुरातात्विक साक्ष्य और वैश्विक इतिहासकारों की सम्मति

आपके द्वारा उपलब्ध कराए गए स्रोतों (विशेषकर डॉ. श्रीराम गोयल की पुस्तक) के अनुसार, मौर्यों के मयूर चिह्न को स्वीकार करने वाले प्रमुख विद्वानों और उनके द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों का विवरण इस प्रकार है:

- **अल्बर्ट ग्रुनवेडेल (Grünwedel):** प्रसिद्ध जर्मन पुरातत्वविद् ग्रुनवेडेल ने सर्वप्रथम यह तर्क दिया था कि मौर्य कला में मयूर का अंकन केवल सजावटी नहीं बल्कि राजवंश का 'लांछन' (Emblem) था। उन्होंने **लौरिया-नन्दनगढ़** के अशोक स्तंभ के आधार (base) पर उत्कीर्ण 4 इंच लंबी मोर की आकृति का हवाला देते हुए इसे मौर्य वंश का 'राज-चिह्न' बताया है।

	
सम्राट अशोक निर्मित सांची स्तूप की सीढ़ी के छज्जे पर एक मोर का आकृति।	सम्राट अशोक निर्मित भारहुत स्तूप पर मोर की आकृति

- **सर जॉन मार्शल और अल्फ्रेड फूशे (Marshall & Foucher): साँची के महान स्तूप** के पूर्वी तोरण पर मयूरों की कई सुंदर आकृतियां खुदी हुई हैं। साँची के उत्खनन और संरक्षण से जुड़े मार्शल और फूशे ने इन मयूर आकृतियों को मौर्य राजवंश के प्रतीक के रूप में स्वीकार किया है, क्योंकि साँची अशोक के व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन से गहराई से जुड़ा था।

- **डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी:** इन्होंने अपनी पुस्तक 'चन्द्रगुप्त मौर्य और उसका काल' (*Chandragupta Maurya and His Times*) में इस मत का समर्थन किया है कि मयूर मौर्यों का वंश-चिह्न था। उन्होंने इसके लिए न केवल पुरातात्विक साक्ष्य बल्कि 'मुद्राराक्षस' जैसे साहित्यिक ग्रंथों के सूक्ष्म संकेतों का भी प्रयोग किया है।

- **एलीयन (Aelian):** यूनानी लेखक एलीयन ने उल्लेख किया है कि पाटलिपुत्र के शाही महल के उद्यानों में बड़ी संख्या में पालतू मोर रखे जाते थे। आधुनिक इतिहासकारों ने इसे इस राजवंश की अपने प्रतीक पक्षी के प्रति विशेष रुचि और सम्मान का परिचायक माना है।[36]

2. साहित्यिक साक्ष्य: नाम और कुल की व्याख्या

सत्यकेतु विद्यालंकार और श्रीराम गोयल दोनों ने मयूर प्रतीक को मौर्यों की 'क्षत्रिय उत्पत्ति' के साथ जोड़कर विस्तृत व्याख्या की है:

- **पिप्पलीवन के मोरिय:** बौद्ध ग्रंथ **'महावंश'** और **'दीघ निकाय'** (महापरिनिब्बान सुत्त) के अनुसार, मौर्य क्षत्रिय थे जो 'पिप्पलीवन' के निवासी थे। **बुद्धघोष** ने अपनी टीका में स्पष्ट किया है कि पिप्पलीवन मयूरों की ध्वनि से गूंजता रहता था, जिसके कारण वहाँ के क्षत्रियों का नाम 'मोरिय' पड़ा।

- **जैन परंपरा और 'मयूर-पोषक':** हेमचन्द्र के **'परिशिष्टपर्वन्'** में चन्द्रगुप्त को 'मयूर-पोषक' (मोर पालने वाले) समुदाय के मुखिया की पुत्री का पुत्र बताया गया है। विद्यालंकार के अनुसार, यह इस बात का स्पष्ट संकेत है कि मौर्यों का सामाजिक और भौगोलिक परिवेश मयूरों से अभिन्न रूप से जुड़ा था।

- **कुल-नाम का संबंध:** कुछ इतिहासकारों का मानना है कि 'मौर्य' शब्द की उत्पत्ति मयूरों के पालन या उनके प्रति पूज्य भाव (totemism) से हुई थी, जो हिमालय की तराई में रहने वाले गणराज्यों की सामान्य परंपरा थी।

3. 'मुरा' (शूद्र उत्पत्ति) सिद्धांत का तार्किक खंडन

डॉ. श्रीराम गोयल ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ 90 और 116 पर बहुत ही विस्तार से उन कारणों की चर्चा की है कि क्यों 'मोर' का प्रतीक होना 'मुरा' नामक शूद्र दासी के सिद्धांत को गलत सिद्ध करता है:

- **व्याकरणिक अशुद्धि:** गोयल के अनुसार, **पाणिनी** के व्याकरण के नियमों के आधार पर 'मुरा' शब्द से 'मौर्य' नहीं बन सकता; 'मौर्य' शब्द 'मुर' नामक गोत्र से ही संभव है।[37]

- **प्रतिष्ठा का प्रश्न:** यदि चन्द्रगुप्त निम्न कुल के होते, तो **कौटिल्य** जैसा कट्टर ब्राह्मण, जो **'अर्थशास्त्र'** में 'अभिजात' (उच्च कुल के) राजा पर बल देता है, उन्हें सम्राट के रूप में कभी स्वीकार नहीं करता।

- **टोटमिस्टिक क्षत्रिय:** लेखकों का निष्कर्ष है कि मयूर प्रतीक मौर्यों के 'टोटमिस्टिक क्षत्रिय' होने का प्रमाण है। प्राचीन काल में कई क्षत्रिय कबीलों के नाम पशु-पक्षियों (जैसे हस्ति, अश्व, कूर्य) पर आधारित थे, और मयूर मौर्यों का पवित्र कुल-चिह्न था।

4. प्रशासनिक और आर्थिक साक्ष्य

- **आहत मुद्राएँ (Punch-marked Coins):** स्रोतों में उल्लेख है कि मौर्य काल की चाँदी की आहत मुद्राओं पर 'मयूर' और 'चन्द्र' के चिह्न पाए जाते हैं। **डॉ. दुर्गाप्रसाद** जैसे मुद्रा-शास्त्रियों ने तर्क दिया है कि ये चिह्न मौर्य शासन की आधिकारिक मुहर (official state symbol) थे।

- **राजकीय वैभव:** एलीयन के विवरण के साथ-साथ **मेगास्थनीज की 'इण्डिका'** के उद्धरणों से भी यह स्पष्ट होता है कि मयूर मौर्यों के राजकीय शिष्टाचार और महल की साज-सज्जा का एक अनिवार्य हिस्सा थे।

---

[36] नन्द-मौर्य साम्राज्य का इतिहास, एस.आर. गोयल, पृष्ठ संख्या: 86

[37] नन्द-मौर्य साम्राज्य का इतिहास, एस.आर. गोयल, पृष्ठ संख्या: 90

मौर्यों का मयूर प्रतीक होना केवल एक पौराणिक कथा नहीं बल्कि एक स्थापित ऐतिहासिक सत्य है जिसे **टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स (Rhys Davids)**, **विन्सेंट स्मिथ**, और **एच.सी. रायचौधरी** जैसे दिग्गज इतिहासकारों ने भी अपनी शोध में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। यह प्रतीक उनके पिप्पलीवन के क्षत्रिय होने और मयूर-प्रधान प्राकृतिक परिवेश से उनके गहरे जुड़ाव को सिद्ध करता है।[38]

[38] नन्द-मौर्य साम्राज्य का इतिहास, एस.आर. गोयल, पृष्ठ संख्या: 85

2 - मौर्य संबंध निर्णय

मौर्य राजवंश का इतिहास केवल मगध के सिंहासन तक सीमित नहीं रहा, अपितु यह एक ऐसी वंशावली है जो भारतीय उपमहाद्वीप के सामाजिक और राजनैतिक मानचित्र पर सदियों तक विभिन्न रूपों में विद्यमान रही है। मगध के केंद्रीय साम्राज्य के पतन के उपरांत मौर्यों की अनेक शाखाएँ राजस्थान, कोंकण, खानदेश, गोवा, मालवा और मथुरा जैसे क्षेत्रों में स्वतंत्र अथवा सामंत शासकों के रूप में स्थापित हुईं। वर्तमान में मौर्यों के वंशजों की पहचान केवल एक विशेष जाति तक सीमित नहीं है, बल्कि ऐतिहासिक, भाषाई और वंशावली साक्ष्यों के आधार पर वे विभिन्न सामाजिक समूहों में बिखरे हुए हैं। इस विस्तारित और शोधपरक लेख में मौर्यों की वर्तमान उपस्थिति, भाषा विज्ञान आधारित साक्ष्यों, कंगनहल्ली के पुरातात्विक साक्ष्य और उनके वंशानुगत संबंधों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत है:

1. वंशावली का आधार: शाक्य-इक्ष्वाकु-आदित्य गोत्र

मौर्यों की वर्तमान पहचान को समझने के लिए उनके मूल को जानना अनिवार्य है। प्राचीन बौद्ध और जैन ग्रंथ मौर्यों को **'शाक्य'** कुल की एक शाखा मानते हैं, जो मूलतः **'इक्ष्वाकु'** वंश से संबंधित थे। 'उत्तरविहार-अट्ठकथा' के अनुसार, सम्राट चंद्रगुप्त **'आदित्य गोत्र'** (सूर्यवंश) के क्षत्रिय थे। यही कारण है कि आज भी वे समुदाय जो स्वयं को इक्ष्वाकु वंशीय अथवा सूर्यवंशी मानते हैं, स्वयं को मौर्यों के रक्त-संबंधी के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

2. कंगनहल्ली का पुरातात्विक साक्ष्य और 'रायो असोको' की परंपरा

सम्राट अशोक के ऐतिहासिक स्वरूप और उनके उपाधि-विकास को समझने में कर्नाटक के कंगनहल्ली (सन्नति के पास) की पुरातात्विक खोज अत्यंत महत्वपूर्ण है।

- **शिलालेखीय साक्ष्य:** कंगनहल्ली में हुई खुदाई के दौरान सम्राट अशोक की एकमात्र शिलालेखीय मूर्ति प्राप्त हुई है, जिसके ऊपर ब्राह्मी लिपि में स्पष्ट रूप से **"रायो असोको" (Rāyā Asoko)** या **"रञ्ञो असोक" (Ranyo Asoka)** लिखा हुआ है।
- **अर्थ और ऐतिहासिक महत्व:** यहाँ 'रञ्ञो' या 'रायो' प्राकृत भाषा के शब्द हैं, जिनका अर्थ **'राजा' (King)** होता है। जहाँ सामान्यतः अशोक के अभिलेखों में उन्हें 'देवानांप्रिय प्रियदर्शी' कहा गया है, वहीं इस मूर्ति पर 'रायो असोको' का अंकन यह प्रमाणित करता है कि जनता और प्रशासन में उन्हें राजा के रूप में संबोधित किया जाता था।
- **वर्तमान उपनामों से संबंध:** इतिहासकार मानते हैं कि समय के साथ 'राजा' के लिए प्रयुक्त होने वाला **'राय'** संबोधन एक शक्तिशाली शासक और प्रशासनिक पहचान का प्रतीक बन गया। वर्तमान समय में भी कई समुदायों में 'राय' उपनाम का प्रचलन इसी प्राचीन मौर्यकालीन परंपरा और भाषाई प्रभाव की जीवंत कड़ी को दर्शाता है।

3. भाषाई विकास: 'मुरिअ/मोरिय' से आधुनिक उपनामों का सफर

मौर्य राजवंश की ऐतिहासिक निरंतरता को समझने के लिए केवल शिलालेख पर्याप्त नहीं हैं, अपितु भाषा विज्ञान (Linguistics) और सामाजिक संरचनाओं का अध्ययन भी अनिवार्य है। समय के साथ 'मोरिय' और 'मुरिअ' जैसे प्राचीन शब्द क्षेत्रीय बोलियों के प्रभाव से आधुनिक जातिनामों और उपनामों में परिवर्तित हो गए हैं:

- **प्राकृत से अवधि प्रभाव (मुरिय से मुराई):** प्राकृत शब्द 'मुरिअ' (Muria) कालांतर में अवधि और अन्य आंचलिक भाषाओं में **'मुराई'** (Murai) के रूप में विकसित हुआ। यह भाषाई रूपांतरण आज भी उत्तर भारत के मुराई/मुराव समुदायों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। प्राकृत में मौर्य को 'मुरिय' लिखा जाता है, सभी प्राकृत जैन ग्रंथों में मौर्य के लिए 'मुरिय' उपयोग हुआ है, इसी प्रकार खारवेल के हाथीगुम्फा अभिलेख में 'मौर्यकाल' के लिए 'मुरियकाल' शब्द लिखा है। -

"मुरियकाल वोछिनं च चोयठि अंग संतिकं तुरियं उपादयति"
संदर्भ: (हाथीगुम्फा अभिलेख : 16वीं पंक्ति)
अर्थ: मौर्यकाल में लुप्त हो चुकी 64 अंगों वाली तौर्यत्रिक कला का उन्होंने पुनरुद्धार किया।

- **पालि से आधुनिक उपनाम:** पालि भाषा का **'मोरिय'** (Moriya) शब्द भाषाई संकुचन और क्षेत्रीय उच्चारण के कारण **'मुराव'**, **'मोरी'** (राजपूत) और महाराष्ट्र के **'मोरे'** (मराठा) उपनामों में परिवर्तित हो गया। पण्डित छोटेलाल शर्मा की पुस्तक 'सप्तखंडी जाति निर्णय' के अनुसार, 'मौर्य' शब्द का 'मुराव', 'मुराऊ', 'मुराई' और 'मोरी' में परिवर्तन मुख्य रूप से भाषाविज्ञान (ध्वनि-परिवर्तन) और लोक-बोलियों के प्रभाव के कारण हुआ है।[39] लोकभाषा (जैसे अवधी, भोजपुरी, ब्रज) में तत्सम (संस्कृत) शब्दों के तद्भव बनने की एक स्वाभाविक प्रक्रिया होती है। संस्कृत के 'मौर्य' शब्द से 'मौर्यवा' ➔ 'मोरावा' ➔ 'मुराव' ➔ 'मुराई' बनने की यह यात्रा भारतीय भाषाओं में तत्सम शब्दों के तद्भव में बदलने के शास्त्रीय नियमों के बिल्कुल अनुकूल है।[40]

अतएव उपरोक्त आधारानुसार मौर्य शब्द बदल कर मौर्यवा हुआ और फिर वही मौर्यवा शब्द भाषा में बदलकर मोरयवा व मोरावा हो गया और मोरावा से आजकल का प्रचलित नाम मुराव रह गया । सरकारी अफसरों ने इस जाति का विवेचन करते हुये इनके भिन्न भिन्न नाम लिखे हैं। जैसे मुराव/मुराऊ/मुराई/मोरी आदि। छोटेलाल शर्मा,
संदर्भ: (सप्तखंडी जाति निर्णय - वॉल्यूम 2, पृ° 259)

4. क्षेत्रीय शाखाएँ और ऐतिहासिक निरंतरता

शिलालेखीय प्रमाणों से सिद्ध होता है कि मध्यकाल तक मौर्यों की कई शाखाएँ शासन कर रही थीं:

- **खानदेश (महाराष्ट्र):** वाघली शिलालेख (1069 ई.) के अनुसार, यहाँ के मौर्य स्वयं को सूर्यवंशी और राजा मान्धाता का वंशज बताते हैं।
- **राजस्थान (चित्तौड़गढ़):** मान मोरी (मनुराज) और चित्रांगद मौर्य जैसे शासकों ने मेवाड़ पर शासन किया। परवर्ती काल में ये शाखाएँ स्थानीय राजपूत कुलों में समाहित हो गईं।
- **कोंकण और गोवा:** यहाँ सुकेतुवर्मन, अनिर्जितवर्मन और चंद्रवर्मन जैसे मौर्य राजाओं के शिलालेख प्राप्त हुए हैं, जो उन्हें 'महाराजा' के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं।

---

[39] मौर्य ➔ मौर्यवा: लोकभाषाओं (अवधी/भोजपुरी/ब्रज) में शब्दों के अंत में 'वा' प्रत्यय जोड़ने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है (जैसे: बालक ➔ लइकवा, मौर्य ➔ मौर्यवा)। मौर्यवा ➔ मोरयवा / मोरावा: प्राकृत/अपभ्रंश के नियमानुसार संस्कृत के 'औ' स्वर का उच्चारण 'ओ' में बदल जाता है और मध्य का 'य' घिसकर लुप्त हो जाता है। मोरावा ➔ मुराव / मुराऊ: आगे चलकर प्रथम स्वर 'ओ' संकुचित होकर 'उ' बन जाता है, जिससे लोक-बोली में 'मुराव' या 'मुराऊ' शब्द निष्पन्न हुआ।

[40] छोटेलाल शर्मा, सप्तखंडी जाति निर्णय - वॉल्यूम 2, पृष्ठ, 259

5. मोरी राजपूत से परमार वंश का उद्भव

क्षत्रिय वंशावलियों के अध्ययन में मौर्यों (मोरियों) और परमारों का संबंध अत्यंत महत्वपूर्ण है। मध्यकालीन चारण साहित्यों द्वारा दिए गए 'अग्नि-कुण्ड' के सिद्धांत को आधुनिक इतिहासकार तार्किक रूप से संभव नहीं मानते।

- **ऐतिहासिक साक्ष्य:** 13वीं शताब्दी के जैनाचार्य मेरुतुंग ने अपनी कृति 'स्थिरावली' में स्पष्ट उल्लेख किया है कि उज्जैन के सम्राट गंधर्वसेन (विक्रमादित्य परमार के पिता) मौर्य सम्राट संप्रति के पौत्र थे।
- **वंश परिवर्तन:** इतिहासकार सुरजन सिंह झाझड़, हरनाम सिंह चौहान और राजस्थान के प्रख्यात इतिहासकार गौरीशंकर ओझा के मत अनुसार, चित्तौड़ और मालवा के मोरी (मौर्य) शासकों के प्रभाव के बाद ही उस क्षेत्र में परमारों का उत्कर्ष हुआ और परमार राजवंश वस्तुतः मौर्य वंश की ही एक शाखा है।

6. प्राचीन भौगोलिक क्षेत्र और वर्तमान जनसांख्यिकी निरंतरता

- मौर्य राजवंश के इतिहास को केवल राजाओं तक सीमित न रखकर यदि इसकी भौगोलिक और जनसांख्यिकीय निरंतरता को देखा जाए, तो स्पष्ट संकेत मिलते हैं:
- **चंद्रगुप्त मौर्य का महल क्षेत्र:** पुरातात्विक खुदाई में जहाँ सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य का ऐतिहासिक राजप्रसाद (राजमहल) प्राप्त हुआ था (पटना क्षेत्र), वहाँ आज भी कोइरी (कुशवाहा), मौर्य और शाक्य समुदाय के लोग बहुतायत संख्या में निवास करते हैं। यह स्थान और जनसमूह का सह-अस्तित्व इस बात का प्रमाण है कि मूल वंशज सदियों से अपनी मातृभूमि से जुड़े हुए हैं।
- **पिप्पलीवन और गोरखपुर क्षेत्र:** बौद्ध साहित्यों में वर्णित शाक्यों के प्राचीन गणराज्य पिप्पलीवन (जहाँ के मयूरपोषक क्षत्रिय 'मोरिय' कहलाए) का क्षेत्र वर्तमान **गोरखपुर और उसके आसपास** का भू-भाग माना जाता है। आज भी इस संपूर्ण क्षेत्र में **मुराई/मुराव** समुदाय के लोग भारी संख्या में पाए जाते हैं, जो इस बात की पुष्टि करते हैं कि उनकी भाषाई और सांस्कृतिक जड़ें आज भी उसी प्राचीन भूमि पर टिकी हैं।

7. वर्तमान सामाजिक समूहों में मौर्य वंशज

ऐतिहासिक संक्रमण और जाति व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण के कारण मौर्यों के वंशज आज विभिन्न समुदायों में पाए जाते हैं:

- **कुशवाहा (कोइरी) और मौर्य संबंध:** कुशवाहा, मौर्य, शाक्य, सैनी, मुराव और मुराई समुदाय स्वयं को प्राचीन 'पिपलिवावन' के मयूरपोषक क्षत्रियों (मोरिय) और एक ही इक्ष्वाकु परंपरा का हिस्सा हैं।
- **जाट और गुर्जर समुदाय:** इन समुदायों में **'मोर'**, **'मोरिया'**, **'मोरी'** और **'मौर'** जैसे गोत्र प्रमुखता से पाए जाते हैं, जो सीधे वंशानुगत संबंध की पुष्टि करते हैं।
- **महार और सातवाहन परंपरा:** कुछ शोधकर्ताओं के अनुसार, आंध्र-सातवाहन भी मूल रूप से मौर्यों के ही वंशज थे। महाराष्ट्र के 'महार' और 'भोज' समुदायों का संबंध इन्हीं मौर्य-सातवाहन गणों से बताया गया है।
- **सैनी समुदाय:** सैनी समाज में **'पिपलोद'** (Pippalod) गोत्र पाया जाता है, जिसका सीधा संबंध मौर्यों के मूल स्थान 'पिपलिवन' (Pippalivana) से जोड़ा जाता है।

- **राजपूत और मराठा:** समय के साथ मोरी राजपूतो मे और मोरे मराठाओ मे समलित हो गए । मध्यकाल में राजस्थान, मालवा और गुज़रात की बोलियों में 'मोरिय' का संक्षिप्त तद्भव रूप 'मोरी' बन गया (जैसे: मोरिय ➔ मोरी)। मराठी भाषा के व्याकरणिक स्वभाव के अनुसार शब्दों के अंत में 'ई' (I) का स्वर प्रायः 'ए' (E) में बदल जाता है (जैसे: शिंदे ➔ शिंदिया/शिंदे, मोरी ➔ मोरे)। मराठा समाज के 96 कुलीन कुलों (षण्णव कुल) में 'मोरे' वंश को सूर्यवंशी/मौर्य परंपरा का प्रत्यक्ष वंशज माना जाता है।

8. 'टक' और नागवंशीय संजाल

मौर्यों का एक गहरा संबंध **'टक'** (तक्षक) अथवा नागवंशीय कुलों से भी रहा है। ऐतिहासिक विश्लेषण के अनुसार, ये टक लोग ही मौर्यों, सातवाहनों और वाकाटकों के मूल आधार थे। आज 'टक' या 'टाक' गोत्र उत्तर भारत की कई जातियों (जैसे चमार, लोधी, मेघवाल आदि) में विद्यमान है, जो उनके प्राचीन राजकुल से संबंधित होने का संकेत देता है।

9. वंशावली की पहचान का अंतिम सूत्र

जाति व्यवस्था के उदय के बाद कई समूहों की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन आया, शोध का निष्कर्ष यह है कि गोत्र नहीं बदलते अतः जिन समुदायों में मोरी, मौर्य, शाक्य, पिप्पल, तक्षक, मोरे, मुराव या मौर जैसे गोत्र या उपनाम/जाति विद्यमान हैं, वे वैज्ञानिक और ऐतिहासिक दृष्टि से मौर्यों की विरासत के वाहक माने जा सकते हैं।

वर्तमान मौर्य वंशज किसी एक बंद समुदाय का हिस्सा नहीं हैं, बल्कि वे भारत की एक विशाल 'नाग-क्षत्रिय' और 'इक्ष्वाकु' विरासत का प्रतिनिधित्व करते हैं। कंगनहल्ली के "रायो असोको" साक्ष्य, भाषाई रूपांतरण (मुरिअ/मोरिय से मुराई/मुराव/मोरी) और ऐतिहासिक वंशालीय कड़ियाँ यह प्रमाणित करती हैं कि मौर्य राजवंश विलुप्त नहीं हुआ, बल्कि वह भारतीय समाज की विभिन्न जातियों और उपजातियों में समाहित हो गया है। मगध से लेकर विभिन्न क्षेत्रों तक फैली उनकी शाखाओं ने समय के साथ अपनी पहचान को क्षेत्रीय और सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला है, और आज की अनेक पिछड़ी, अनुसूचित और उच्च कुलीन क्षत्रिय जातियाँ समान रूप से उस महान मौर्य रक्तबीज का हिस्सा हैं जिसने कभी अखंड भारत का स्वप्न साकार किया था।

3 - मौर्य इतिहास विमर्श

❖ मगध मौर्य राजवंश

मगध का मौर्य राजवंश भारतीय इतिहास का वह धुरी स्तंभ है जिसने पहली बार भारत को एक संगठित राजनैतिक सत्ता और सार्वभौमिक साम्राज्य प्रदान किया। पाटलिपुत्र को केंद्र बनाकर शासन करने वाले इन सम्राटों ने न केवल सीमाओं का विस्तार किया, बल्कि शासन-कला और संस्कृति के प्रतिमान भी स्थापित किए।

1. मगध साम्राज्य की स्थापना और चंद्रगुप्त मौर्य: मौर्य साम्राज्य का उदय नंद वंश के विनाश और चाणक्य की कूटनीतिक विजय का परिणाम था। चंद्रगुप्त मौर्य का राज्याभिषेक केवल एक सत्ता परिवर्तन नहीं, बल्कि एक प्राचीन क्षत्रिय कुल का पुनरुत्थान था। तमिल संगम काव्य 'अहनानूरु' में 'विंडेचिल मोरियार' (रथों वाले मोरियार) द्वारा दक्षिण भारत पर किए गए सैन्य अभियानों का स्पष्ट वर्णन मिलता है।

- **राजकुलीनता और चाणक्य का संकल्प:** 'विष्णु पुराण' में स्पष्ट उल्लेख है कि चाणक्य ने चंद्रगुप्त को उनके राजकुलीन जन्म के कारण ही चुना था:

"ततश्च नव चैतान्नन्दान् कौटिल्यो ब्राह्मणस्समुद्धरिष्यति ॥ २६ ॥ तेषामभावे मौर्याः पृथिवीं भोक्ष्यन्ति ॥ २७ ॥ कौटिल्य एव चन्द्रगुप्तमुत्पन्नं राज्येऽभिषेक्ष्यति ॥ २८ ॥"
संदर्भ: (विष्णु पुराण : अंश- 4 : अध्याय 24: श्लोक 26-28)
अर्थ: उन नौ नंदों को कौटिल्य नामक ब्राह्मण नष्ट करेगा। उनके अभाव में मौर्य पृथ्वी का भोग करेंगे। वही कौटिल्य चंद्रगुप्त को (राजकुल में) उत्पन्न होने के कारण राज्य पद पर अभिषिक्त करेगा।

- **क्षत्रिय कुल की पुष्टि :** 'महाबोधिवंश' चंद्रगुप्त के जन्म स्थान और कुल का विवरण देते हुए कहता है:

"सक्यपुत्तेहि मापिते मोरियनगरे नरिन्दकुलसम्भवो। चन्दगुत्तकुमारो चाणक्कद्विज पतिसमुस्सहितो। पाटलिपुट्टे राजा अहोसि।"
संदर्भ: (महाबोधिवंश - द्वितीयसंगितिकथा - पृष्ठ 98)
अर्थ: शाक्य पुत्रों द्वारा बसाए गए 'मोरियनगर' के 'नरिन्द कुल' (राजकुल) में जन्मे चंद्रगुप्त कुमार, चाणक्य द्विज के सहयोग से पाटलिपुत्र के राजा बने।

- **साम्राज्य विस्तार और सुदर्शन झील (अभिलेखीय प्रमाण):** चंद्रगुप्त का प्रभाव मगध से सुदूर पश्चिम (गुजरात) तक था। रुद्रदामन का जूनागढ़ शिलालेख इसकी पुष्टि करता है:

"मौर्यस्य राज्ञः चन्द्रगु[प्त][स्य] राष्ट्रियेण [वै]श्येन पुष्यगुप्तेन कारितं अशोकस्य मौर्यस्य (कृ)ते यवनराजेन तुष[।] स्फेनाधिष्ठाय..."
संदर्भ: (रुद्रदामन का जूनागढ़ शिलालेख, 150 ईस्वी)
अर्थ: मौर्य राजा चंद्रगुप्त के प्रांतीय राज्यपाल (राष्ट्रिय) पुष्यगुप्त द्वारा (सुदर्शन झील) का निर्माण करवाया गया और मौर्य शासक अशोक के लिए यवनराज तुषास्फ द्वारा इसे सुदृढ़ किया गया।

2. सम्राट बिंदुसार (अमित्रघात/भद्रसार): चंद्रगुप्त के पश्चात उनके पुत्र बिंदुसार ने मगध का शासन संभाला। वे अपने पिता के समान ही शक्तिशाली और क्षत्रिय धर्म के प्रति निष्ठावान थे।

- **शाक्य कुलीनता का साक्ष्य:** 'विनयपिटक' की 'सारत्यदीपनी टीका' उन्हें स्पष्ट रूप से शाक्य वंश का बताती है:

"बिन्दुसारो नाम सक्यकुलप्पसुतो चन्दगुत्तस्स नाम रञ्ञो पुत्तो।"
संदर्भ: (विनयपिटक : सारत्यदीपनी टीका: भाग 1: बहिर्निदानकथा)
अर्थ: बिंदुसार नाम का 'शाक्यकुलीन' पुत्र, राजा चंद्रगुप्त का पुत्र था।

- **क्षत्रियत्व का स्वाभिमान:** 'दिव्यावदान' में बिंदुसार स्वयं को 'मूर्धाभिषिक्त क्षत्रिय' कहते हैं:
राजाह । त्वं नापिनी अहं राजा क्षत्रियो मूर्धाभिषिक्तः। कथं मया सार्धं समागमो भविष्यति।
संदर्भ: (दिव्यावदान: 26 पांशुप्रदानावदान - 67)
अर्थ: राजा (बिंदुसार) ने कहा- "तुम नाईन हो और मैं राजा हूँ, मूर्धाभिषिक्त क्षत्रिय हूँ। तुम्हारे साथ मेरा समागम कैसे संभव है?" (यह उन्होंने सुभद्रांगी से कहा था, जब उन्हें उसकी जाति पर संशय था)।

3. सम्राट अशोक (देवानांप्रिय प्रियदर्शी): अशोक के शासनकाल में मगध साम्राज्य ने अपनी भौगोलिक और नैतिक सीमाओं का अभूतपूर्व विस्तार किया। उन्होंने 'धम्म' को शासन का आधार बनाया।

- **क्षत्रिय धर्म का पालन (प्याज का निषेध):** बौद्ध ग्रंथों के अनुसार अशोक अपने क्षत्रिय वर्ण के नियमों के प्रति अत्यंत सजग थे:
"राजाह । देवि, अहं क्षत्रियः कथं पलाण्डुं परिभक्षयामि।"
संदर्भ: (दिव्यावदान : 27 कुणालवदानम् : 116)
अर्थ: राजा (अशोक) ने अपनी पत्नी तिष्यरक्षिता से कहा - "देवी, मैं क्षत्रिय हूँ, मैं प्याज (पलाण्डु) कैसे खा सकता हूँ?"

- **84,000 स्तूपों का निर्माण (विदेशी साक्ष्य):** म्यांमार (बर्मा) से प्राप्त 'धम्मचेती का कल्यानी अभिलेख' और 'बोधगया बर्मी अभिलेख' अशोक के निर्माण कार्यों की पुष्टि करते हैं:
"सिरिधम्मासोक म्यिथौ मिंग्यि सेति षठ्ठन्‌ दन्‌...."
संदर्भ: (बोधगया का बर्मी अभिलेख)
अर्थ: श्री धर्म-अशोक, जो जंबूद्वीप का शासक था, उसने (भगवान बुद्ध के निर्वाण के 218 वर्ष बाद) 84,000 चैत्यों/स्तूपों का निर्माण किया।

- **आर्यपुत्रों की नियुक्ति:** अशोक ने अपने पुत्रों को साम्राज्य के विभिन्न केंद्रों पर गवर्नर नियुक्त किया और उन्हें 'आर्यपुत्र' कहा:
"सुवंणगिरीते अयपुतस महामाताणं च वचनेन..."
संदर्भ: (ब्रह्मगिरि लघु शिलालेख, पंक्ति 1)
अर्थ: सुवर्णगिरि से 'आर्यपुत्र' (राजकुमार) और महामात्रों की आज्ञा से...।

बर्मा में हंथावाडी साम्राज्य के राजा धम्मचेती (धम्मज़ेदी) ने अपने कल्याणी अभिलेख में अशोक का संछिप्त इतिहास लिख रखा है, उसकी तीसरी और चौथी पंक्ति कुछ इस प्रकार है : [41]
साक्यमुनिनो सम्मसम्बुद्धस्स परिनिब्बानतो द्विन्नं वस्ससतानं उपरि अट्ठारसमे वस्से वितिवत्ते धम्मसोकराज अभिसेकं पापुनि। ततो चतुत्थे वस्से निग्रोधसमनेरं पाटिच्च बुद्धससने संजात तिविय पसदेन भिक्खुणं लभसक्करो वेपुल्लं अगमसि तित्थियं परिहयि।
संदर्भ: (धम्मचेती का कल्यानी अभिलेख, पंक्ति संख्या 3-4)
अर्थ: दो सौ अठारह वर्षों का समय बीत गया था, साक्यमुनी (शाक्यमुनी) के महापरिनिर्वाण के जब धम्मासोकराजा (धर्माशोकराजा) का राज्याभिषेक किया गया था। इस घटना के चौथे वर्ष में, निग्रोध के मार्गदर्शन से राजा (सम्राट अशोक) का बुद्ध के शासन में विश्वास बहुत ही उत्कृष्ट हो गया था; और बौद्धिकों (ज्ञानियों) को दिए जाने वाले उपहार और सम्मान में वृद्धि हुई, जबकि उससे पूर्व बौद्धिकों को दिए जाने वाले उपहार व सम्मान खत्म हो गए थे ।

गाहड़वाल वंश की रानी कुमारदेवी के प्रसिद्ध सारनाथ अभिलेख में मौर्य सम्राट अशोक को "धर्म अशोक" कहकर संबोधित किया गया है:[42]
धर्माशोक नराधिपस्य समये श्री धर्मचक्रो जिनो यादृक् तन्नय रक्षितः पुनरयं चक्रे ततोऽप्यद्भुतम्॥
संदर्भ: (रानी कुमारदेवी, सारनाथ अभिलेख)
अर्थ: सम्राट धर्म अशोक के शासनकाल में श्री धर्मचक्र जिन जिस रूप में नीतिपूर्वक संरक्षित किया गया था, रानी कुमारदेवी ने उसका पुनः जीर्णोद्धार करके एक अत्यंत अद्भुत कार्य सम्पन्न किया।

---

[41] The Kalyānī inscriptions erected by King Dhammaceti at Pegu in 1476 A. D. Text and translation. Page 1 & 46
[42] Journal of Ancient Indian History, Volume-3. 1969–70. page 90-91.

विभिन्न अभिलेखों एवं पाली ग्रंथों में सम्राट अशोक के नाम

1. प्राकृत अभिलेख

अभिलेख	मूल पाठ	अर्थ
मास्की अभिलेख (कर्नाटक)	देवानांप्रियसि असोक (*Devanampriyasi Ashoka*)	देवताओं के प्रिय अशोक
गुर्जरा अभिलेख (मध्य प्रदेश)	देवानांपिय पियदसि असोकराज (*Devanampiya Piyadasi Ashokaraja*)	देवताओं के प्रिय, प्रियदर्शी अशोक राजा
कंगनहल्ली महास्तूप अभिलेख (कर्नाटक)	राण्यो असोक (*Ranyo Ashoka*)	राजा अशोक
सालीहुंडम अभिलेख (आंध्र प्रदेश)	धम्म राणो असोक सिरि (*Dhamma Rano Ashoka Siri*)	धार्मिक एवं श्रीसंपन्न राजा अशोक

2. पाली ग्रंथ एवं विदेशी अभिलेख

स्रोत / अभिलेख	मूल पाठ	अर्थ
कल्याणी अभिलेख (पेगू, बर्मा - राजा धम्मचेती.)	धम्मासोकराजा (*Dhammasokaraja*)	धर्माशोक राजा
दीपवंश (पाली बौद्ध ग्रंथ, श्रीलंका)	• पियदस्सन (*Piyadassana)* • धम्मासोको *(Dhammasoka)*	• प्रियदर्शी • धर्माशोक

3. संस्कृत अभिलेख

अभिलेख	मूल पाठ	अर्थ
रुद्रदामन का जूनागढ़ अभिलेख (गुजरात)	अशोकस्य मौर्यस्य (*Ashokasya Mauryasya*)	मौर्य वंश के अशोक
रानी कुमारदेवी का सारनाथ अभिलेख (उत्तर प्रदेश)	धर्माशोक नराधिपस्य (*Dharmashoka Naradhipasya*)	सम्राट धर्म-अशोक

4. चाणक्य का ऐतिहासिक अस्तित्व: भारतीय इतिहास में उनके ऐतिहासिक प्रमाण के रूप में उनके नामों - चाणक्य और विष्णुगुप्त के स्पष्ट उल्लेख प्राचीन अभिलेखों में मिलते हैं। उदाहरण के लिए, 5वीं शताब्दी ईस्वी के कदंब नरेश रविवर्मा के गुंडानपुर स्तंभ शिलालेख में राजा को "विष्णुगुप्त के नीतिशास्त्र में पारंगत" बताया गया है, जो सीधे तौर पर चाणक्य की राजनीतिक परंपरा की ओर संकेत करता है। इसके अलावा, दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व के साँची स्तूप संख्या 2 के ब्राह्मी शिलालेख में 'चाणक्य' नाम के एक भिक्षु का दान-अभिलेख मिलता है।

- **कदंब नरेश रविवर्मा का गुंडानपुर स्तंभ शिलालेख :** कदंब राजा रविवर्मा (लगभग 465–500 ईस्वी) का गुंडानपुर स्तंभ शिलालेख एक शाही अनुदान का अभिलेख है जो राजा के राजनीतिक और व्यक्तिगत गुणों की प्रशंसा करता है। इस अभिलेख की एक अत्यंत महत्वपूर्ण पंक्ति यह उल्लेख करती है कि राजा रविवर्मा "विष्णुगुप्त के नीतिशास्त्र में पारंगत थे।"
- **साँची स्तूप संख्या 2 का ब्राह्मी शिलालेख :** भारत के सबसे प्राचीन और महत्वपूर्ण बौद्ध स्थलों में से एक, साँची स्तूप संख्या 2 पर उत्कीर्ण एक प्रारंभिक ब्राह्मी शिलालेख 'चाणक्य' नामक एक भिक्षु द्वारा दिए गए दान का उल्लेख करता है। यह अभिलेख प्रारंभिक मौर्य काल से संबंधित है और भारत के प्राचीनतम बौद्ध दान-अभिलेखों में से एक है। [43]

ब्राह्मी लेख: 𑀅𑀭𑀳𑀓𑀲 𑀪𑀺𑀔𑀼𑀦𑁄 𑀘𑀸𑀦𑀸𑀓𑀬 𑀤𑀸𑀦𑀁
लिप्यंतरण (देवनागरी): अरहकस भिक्खुंनो चानाकय दानम्
अनुवाद (अलेक्जेंडर कनिंघम द्वारा): पवित्र भिक्षु चाणक्य का दान।

5. चीनी यात्री ह्वेनसांग के 7वीं शताब्दी के यात्रा वृत्तांत (सी-यु-की) में मगध पर उस वक़्त राज कर रहे मौर्य शासक राजा पूर्णवर्मा का उल्लेख है, जिसका नाम उत्तर-गुप्त काल के एक प्रमुख मौर्यवंशी शासक के रूप में मिलता है।

- ह्वेनसांग के विवरण के अनुसार, पूर्णवर्मन मौर्य सम्राट अशोक के कुल में जन्मे प्रत्यक्ष वंशज (या उस वंश के अंतिम जीवित शासक) थे, जिन्होंने मगध पर शासन किया।
- **बोधि वृक्ष का संरक्षण एवं पुनरुद्धार:** गौड़ देश के शैव राजा शशांक द्वारा बोधगया के पवित्र बोधि वृक्ष को कटवाकर और उसकी जड़ों को नष्ट करने के बाद, पूर्णवर्मन ने गायों के दूध से सींचकर उस वृक्ष को पुनः पुनर्जीवित किया था। उन्होंने वृक्ष की सुरक्षा के लिए उसके चारों ओर 24 फीट ऊँची पत्थर की दीवार का निर्माण भी कराया था। पूर्णवर्मन बौद्ध धर्म के महान संरक्षक थे। उन्होंने बोधगया के पास बुद्ध की एक विशाल (लगभग 80 फीट ऊँची) तांबे की प्रतिमा और उससे जुड़े एक बड़े विहार का निर्माण कराया था।

मगध के मौर्य राजाओं ने न केवल अखंड भारत का स्वप्न साकार किया, बल्कि उन्होंने 'मूर्धाभिषिक्त क्षत्रिय' और 'आदित्य-बान्धव' (सूर्यवंशी) के रूप में अपनी उच्च जातीय गरिमा को सदैव अक्षुण्ण रखा। मगध के इन दस राजाओं ने प्राचीन भारत के राजनैतिक और सांस्कृतिक गौरव को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया। ये तो समय का खेल ही है की उसी मगध पर प्रमुख साम्राज्य खतम होने के कुछ सदियो बाद पुनः मौर्य शासकों ने शासन किया कुछ समय के लिए।

6. पुराणों में मौर्य वंश का पूरा उल्लेख मिलता है, लेकिन मूल पुराणों में कहीं भी उन्हें शूद्र नहीं कहा गया है। विष्णु पुराण, श्रीमद्भागवत पुराण, वायु पुराण और मत्स्य पुराण जैसे सभी प्रमुख ग्रंथों के मूल श्लोकों में चंद्रगुप्त मौर्य तथा उनके वंशजों के नाम और शासनकाल का स्पष्ट वर्णन है, पर उनकी जाति के रूप में 'शूद्र' शब्द का प्रयोग कहीं नहीं हुआ है। नंद काल के दौरान पुराणों में जो 'शूद्रप्राय' शब्द आया है, वह कलियुग में राजाओं के आचरण में आई गिरावट को दर्शाने के लिए कहा गया था, न कि मौर्यों के जातिगत परिचय के लिए। चंद्रगुप्त को किसी दासी का पुत्र या शूद्र बताने की बातें मूल श्लोकों का भाग नहीं हैं, बल्कि यह बाद के अनुवादकों द्वारा ब्रैकेट में जोड़ी गई टिप्पणियों और टीकाओं का परिणाम है। ऐतिहासिक साक्ष्यों और बौद्ध व जैन परंपराओं में भी मौर्यों को क्षत्रिय माना गया है, इसलिए मूल पुराणों के आधार पर मौर्यों को शूद्र कहना पूरी तरह गलत है।

शासिष्यति महापद्मो द्वितीय इव भार्गवः ॥ १० ॥तस्य चाष्टौ भविष्यन्ति सुमाल्यप्रमुखाः सुताः य इमां भोक्ष्यन्ति महीं राजानश्च शतं समाः ॥ ११ ॥नव नन्दान्द्विजः कश्चित्प्रपन्नानुद्धरिष्यति तेषां अभावे जगतीं मौर्या भोक्ष्यन्ति वै कलौ ॥ १२ ॥ स एव चन्द्र गुप्तं वै द्विजो राज्येऽभिषेक्ष्यति तत्सुतो वारिसारस्तु ततश्चाशोकवर्धनः ॥ १३ ॥ सुयशा भविता तस्य सङ्गतः

[43] Alexander Cunningham, The Bhilsa Topes: Or, Buddhist Monuments of Central India, page-283

सुयशःसुतः शालिशूकस्ततस्तस्य सोमशर्मा भविष्यति १४ ॥ शतधन्वा ततस्तस्य भविता तद्बृहद्रथः मौर्या ह्येते दश नृपाः सप्तत्रिंशच्छतोत्तरम् समा भोक्ष्यन्ति पृथिवीं कलौ कुरुकुलोद्वह ॥ १५ ॥ अग्निमित्रस्ततस्तस्मात्सुज्येष्ठो भविता ततः ॥ १६ ॥ वसुमित्रो भद्रकश्च पुलिन्दो भविता सुतः ततो घोषः सुतस्तस्माद्वज्रमित्रो भविष्यति ॥ १७ ॥ ततो भागवतस्तस्माद्देवभूतिरिति श्रुतः शुङ्गा दशैते भोक्ष्यन्ति भूमिं वर्षशताधिकम् ॥ १८ ॥

संदर्भ: (श्रीमद्भागवत पुराण स्कन्ध १२, अध्याय १, श्लोक १०-१८)

अर्थ: महापद्म पृथ्वीका एकच्छत्र शासक होगा। उसके शासनका उल्लङ्घन कोई भी नहीं कर सकेगा। क्षत्रियोंके विनाशमें हेतु होनेकी दृष्टिसे तो उसे दूसरा परशुराम ही समझना चाहिये ॥ १० ॥ उसके सुमाल्य आदि आठ पुत्र होंगे। वे सभी राजा होंगे और सौ वर्षतक इस पृथ्वीका उपभोग करेंगे ॥ ११ ॥ कौटिल्य, वात्स्यायन तथा चाणक्यके नामसे प्रसिद्ध एक ब्राह्मण विश्वविख्यात नन्द और उनके सुमाल्य आदि आठ पुत्रोंका नाश कर डालेगा। उनका नाश हो जानेपर कलियुगमें मौर्यवंशी नरपति पृथ्वीका राज्य करेंगे ॥ १२ ॥ वही ब्राह्मण पहले-पहल चन्द्रगुप्त मौर्यको राजाके पदपर अभिषिक्त करेगा। चन्द्रगुप्तका पुत्र होगा वारिसार और वारिसारका अशोकवर्द्धन ॥ १३ ॥ अशोकवर्द्धनका पुत्र होगा सुयश। सुयशका सङ्गत, सङ्गतका शालिशूक और शालिशूकका सोमशर्मा ॥ १४ ॥ सोमशर्माका शतधन्वा और शतधन्वाका पुत्र बृहद्रथ होगा। कुरुवंशविभूषण परीक्षित् ! मौर्यवंशके ये दस नरपति कलियुगमें एक सौ सैंतीस वर्षतक पृथ्वीका उपभोग करेंगे। बृहद्रथका सेनापति होगा पुष्पमित्र शुङ्ग। वह अपने स्वामीको मारकर स्वयं राजा बन बैठेगा। पुष्पमित्रका अग्निमित्र और अग्निमित्रका सुज्येष्ठ होगा ॥ १५-१६ ॥ सुज्येष्ठका वसुमित्र, वसुमित्रका भद्रक और भद्रकका पुलिन्द, पुलिन्दका घोष और घोषका पुत्र होगा वज्रमित्र ॥ १७ ॥ वज्रमित्रका भागवत और भागवतका पुत्र होगा देवभूति। शुङ्गवंशके ये दस नरपति एक सौ बारह वर्षतक पृथ्वीका पालन करेंगे ॥ १८ ॥

उद्धरिष्यति तान् सर्वान् कौटिल्योः वैदिरष्टभिः । भुक्त्वा महीं वर्षशतं ततो मौर्यान् गमिष्यति ॥ २२
भविता शतधन्वा च तस्य पुत्रस्तु षट् समाः । बृहद्रथस्तु वर्षाणि तस्य पुत्रश्च सप्ततिः ॥२३॥ षट्त्रिंशत् तु समा राजा भविता शक एव च । सप्तानां दश वर्षाणि तस्य नप्ता भविष्यति ।। २४ ॥ राजा दशरथोऽष्टौ तु तस्य पुत्रो भविष्यति । भविता नव वर्षाणि तस्य पुत्रश्च सप्ततिः ॥ २५ ॥ इत्येते दश मौर्यास्तु ये भोक्ष्यन्ति वसुंधराम्। सप्तत्रिंशच्छतं पूर्ण तेभ्यः शुङ्गान् गमिष्यति ॥ २६ ॥

संदर्भ: (मत्स्य पुराण : अध्याय २७२, श्लोक २२-२६)

अर्थ: बारह वर्षोंके बाद कौटिल्य महापद्म के पुत्रोंको उखाड़ देगा। फिर उसके सौ वर्षों तक राज्य करने के बाद यह राज्य मौर्यवंश के अधिकार में चला जायगा। इसके पश्चात् उसका पुत्र शतधन्वा होगा, जो छः वर्षों तक राज्य करेगा। उसके बाद उसका पुत्र बृहद्रथ सत्तर वर्षों तक राज्य करेगा। तदनन्तर छत्तीस वर्षों तक शक राजा रहेगा। शक के बाद उसका नाती सत्तर वर्षों तक राज्य करेगा उसका पुत्र राजा दशरथ होगा, जो आठ वर्षों तक राज्य करेगा। तदनन्तर उसका पुत्र उन्नासी वर्षों तक राज्य करेगा। ये दस मौर्यवंशीय राजा 137 वर्षों तक पृथ्वी का शासन करेंगे। तदनन्तर यह राज्य शुंगवंशीयों के हाथ में चला जायगा।

चन्द्रगुप्तं नृपं राज्ये कौटिल्यः स्थापयिष्यति । चतुर्विंशत्समा राजा चन्द्रगुप्तो भविष्यति ॥ १४४ ॥ भविता भद्रसारस्तु पञ्चविंशत्समा नृपः । षट्त्रिंशत्तु समा राजा अशोकानां च तृप्तिदः ॥ १४५ ॥ तस्य पुत्रः कुलालस्तु वर्षाण्यष्टौ भविष्यति । कुशालसूनुरष्टौ च भोक्ता वै बन्धुपालितः ॥ १४६ ॥ बन्धुपालितदायादो भविता चेन्द्रपालितः । भविता सप्त वर्षाणि देववर्मा नराधिपः ॥ १४७॥ राजा शतधनुश्चापि तस्य पुत्री भविष्यति । बृहद्रथश्च वर्षाणि सप्त वै भविता नृपः ॥१४८॥ इत्येते नव मौर्या वै भोक्ष्यन्ति च वसुंधराम् । सप्तत्रिंशच्छतं पूर्णं तेभ्यः शुङ्गो गमिष्यति ॥ १४९ ॥

संदर्भ: (ब्रह्माण्ड पुराण : मध्यभाग, अध्याय ७४, श्लोक १४४-१४९)

अर्थ: कौटिल्य ही चंद्रगुप्त को राजा के रूप में राज्य में स्थापित करेगा, वह चौबीस वर्षों तक राज करेगा। उसके बाद भद्रसार अर्थात बिंदुसार पच्चीस वर्ष तक राजा होगा, फिर अशोक नाम का राजा मनुष्यों में छब्बीस वर्षों तक राज करेगा || उसका पुत्र कुणाल आठ वर्षों तक राज करेगा, इंद्रपालित कुणाल का पुत्र बन्धुपालित आठ वर्षों तक राज्य पद पर समासीन होगा || बन्धुपालित का उतराधिकारी दस वर्षो के लिए राजा होगा, फिर नराधिपति देववर्मा सात वर्षों के लिए राजा होगा || तंदुपरांत उसका पुत्र राजा शतधर आठ वर्ष राज करेगा, पश्चात राजा बृहदश्व सात वर्ष तक राज करेगा || ये नव राजा पृथ्वी का भोग करेंगे, उन सबका राजत्व काल कुल मिलाकर १३७ वर्षों का होगा। दशवे राजा बृहद्रथ को मार सेनानी पुष्पमित्र सत्तारुड हो जायेगा, वह सात वर्षों तक राज करेगा।

चन्द्रगुप्तं नृपं राज्ये कौटिल्यः स्थापयिष्यति । चतुर्विंशत्समा राजा चन्द्रगुप्तो भविष्यति ।। ३७.३२५ ।।भविता भद्र सारस्तु पञ्चविंशत्समा नृपः । षड्विंशत्तु समा राजा ह्यशोको भविता नृषु ।। ३७.३२६ ।। तस्य पुत्रः कुनालस्तु वर्षाण्यष्टौ भविष्यति। कुनाल सूनुरष्टौ च भोक्ता वै बन्धुपालितः ।। ३७.३२७ ।। बन्धुपालितदायादो दशमानीन्द्रपालितः । भविता सप्तवर्षाणि देववर्म्मा नराधिपः ।। ३७.३२८ ।। राजा शतधरश्चाष्टौ तस्य पुत्रो भविष्यति । बृहदश्वश्च वर्षाणि सप्त वै भविता नृपः ।। ३७.३२९ ।। इत्येते नव भूपा ये भोक्ष्यन्ति च वसुन्धराम्। सप्तत्रिंशच्छतं पूर्णं तेभ्यस्तु गौर्भविष्यति ।।३७.३३० ।।

संदर्भ: (वायु पुराण उत्तरार्ध, अध्याय ३७, श्लोक ३२५-३३०)

अर्थ: कौटिल्य ही चंद्रगुप्त को राजा के रूप में राज्य में स्थापित करेगा, वह चौबीस वर्षों तक राज करेगा। उसके बाद भद्रसार अर्थात बिंदुसार पच्चीस वर्ष तक राजा होगा, फिर अशोक नाम का राजा मनुष्यों में छब्बीस वर्षों तक राज करेगा। उसका पुत्र कुणाल आठ वर्षों तक राज करेगा, इंद्रपालित कुणाल का पुत्र बन्धुपालित आठ वर्षों तक राज्य पद पर समासीन होगा। बन्धुपालित का उतराधिकारी दस वर्षो के लिए राजा होगा, फिर नराधिपति देववर्मा सात वर्षों के लिए राजा होगा। तंदुपरांत उसका पुत्र राजा शतधर आठ वर्ष राज करेगा, पश्चात राजा बृहदश्व सात वर्ष तक राज करेगा। ये नव राजा पृथ्वी का भोग करेंगे, उन सबका राजत्व काल कुल मिलाकर 137 वर्षों का होगा।

ततश्च नव चैतान्नन्दान् कौटिल्यो ब्राह्मणस्समुद्धरिष्यति ॥ २६ ॥ तेषामभावे मौर्याः पृथिवीं भोक्ष्यन्ति ॥ २७ ॥ कौटिल्य एव चन्द्रगुप्तमुत्पन्नं राज्येऽभिषेक्ष्यति ॥ २८ ॥ तस्यापि पुत्रो बिन्दुसारो भविष्यति ॥ २९ ॥ तस्याप्यशोकवर्द्धनस्ततस्सुयशास्ततश्च दशरथ- स्ततश्च संयुतस्ततश्शालिशूकस्तस्मात्सोमशर्मा तस्यापि सोमशर्मणश्शतधन्वा ॥ ३० ॥ तस्यापि बृहद्रथनामा भविता ॥ ३१ ॥ एवमेते मौर्या दश भूपतयो भविष्यन्ति अब्दशतं सप्तत्रिंशदुत्तरम् ॥ ३२ ॥

संदर्भ: (विष्णु पुराण : अंश ४, अध्याय २४, श्लोक २६-३२)

अर्थ:तदनन्तर इन नवों नन्दों को कौटिल्य नामक एक ब्राह्मण नष्ट करेगा, उनका अन्त होने पर मौर्य नृपतिगण पृथिवी को भोगेंगे। कौटिल्य ही चन्द्रगुप्त को राज्याभिषिक्त करेगा । । २५ - २८ ॥ चन्द्रगुप्त का पुत्र बिन्दुसार, बिन्दुसार का अशोकवर्द्धन, अशोकवर्द्धन का सुयशा, सुयशा का दशरथ, दशरथ का संयुत, संयुत का शालिशूक, शालिशूक का सोमशर्मा, सोमशर्मा का शतधन्वा तथा शतधन्वा का पुत्र बृहद्रथ होगा। इस प्रकार एक सौ सैंतीस (१३७) वर्ष तक ये दस मौर्यवंशी राजा राज्य करेंगे ॥ २९ - ३२ ॥

7. ऐतिहासिक व पौराणिक संदर्भ एवं प्रस्तुत विश्लेषण

- हिंदू पुराणों का मत है कि नंद वंश की शुरुआत क्षत्रिय और नाई स्त्री के गर्भ से जन्मे संतान ने की थी, इसलिए वे शूद्र कहलाए। पुराण का कथन की नन्द के साथ ही सब शूद्र राजा धरती पर होंगे, इसपर पौराणिक विद्वानों का मानना है कि नंद वंश के बाद के सभी कलियुगी राजा शूद्र नहीं थे (जैसे शिवाजी, महाराणा प्रताप आदि)। नंद काल के संदर्भ में कही गई बातें केवल उसी समय तक सीमित थीं। पुराणों में काण्व वंश को ब्राह्मणों का वंश बताया गया है (*चत्वारिंशद् द्विजाहोते काण्वा भोक्ष्यन्ति वै महीम्*)। इससे सिद्ध होता है कि शूद्र शासन की बात केवल नंद काल के लिए ही थी। किसी भी पुराण में शुंग वंश को स्पष्ट रूप से ब्राह्मण नहीं कहा गया है, क्योंकि कुछ संदर्भों के अनुसार उनका संबंध मौर्य राजा संप्रति के वंश से जोड़ा जाता है। मूल श्लोकों में दासी या 'मुरा' शब्द का कोई उल्लेख नहीं मिलता। अनुवाद में ब्रैकेट में 'दासी मुरा' जोड़ा जाना पाठगत विचलन को दर्शाता है, जिसे मूल श्लोक के निष्पक्ष अनुवाद में सुधार की आवश्यकता के रूप में देखा जाता है।

❖ राजस्थान मौर्य राजवंश

मगध के केंद्रीय मौर्य साम्राज्य के ह्रास के उपरांत मौर्यों की एक अत्यंत प्रतापी शाखा ने राजस्थान (तत्कालीन राजपूताना) के विभिन्न क्षेत्रों, विशेषकर मेवाड़ (चित्तौड़गढ़), मालवा और कोटा-बूंदी क्षेत्र में अपनी सत्ता स्थापित की। राजस्थान का मौर्य राजवंश न केवल अपनी वीरता के लिए विख्यात था, बल्कि स्थापत्य कला और जल संरक्षण के क्षेत्र में भी उनका योगदान अतुलनीय है। शिलालेखों और मध्यकालीन ग्रंथों के प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि वे स्वयं को सूर्यवंशी (रघुवंशी) क्षत्रिय मानते थे।
राजस्थान के मौर्य इतिहास को निम्नलिखित प्रमुख स्तंभों के आधार पर समझा जा सकता है:

1. चित्तौड़गढ़ के संस्थापक: चित्रांगद मौर्य (मोरी): ऐतिहासिक और साहित्यिक साक्ष्यों के अनुसार, विश्वविख्यात चित्तौड़गढ़ दुर्ग का निर्माण मौर्य राजा चित्रांगद ने करवाया था।

- **कुमारपाल प्रबंध का साक्ष्य:** 13वीं शताब्दी के जैन ग्रंथ 'कुमारपाल प्रबंध' में चित्रांगद मौर्य को 'रघुवंशी' (सूर्यवंशी) क्षत्रिय कहा गया है:

"पुरा रघोवंशे चित्राङ्गदो राजाऽभिनवैः फलैः"
संदर्भ: (कुमारपाल प्रबंध, पृष्ठ 59)
अर्थ: प्राचीन काल में रघुवंश में राजा चित्रांगद हुए।

- **दुर्ग निर्माण का उल्लेख:** इसी ग्रंथ में दुर्ग निर्माण का स्पष्ट प्रमाण मिलता है:

"यत्र चित्रांगदश्चक्रे दुर्गं चित्रनगोपरि नगरं चित्रकूटाख्यं देवेने तदधिष्ठितम् ॥"
अर्थ: जहाँ चित्रांगद ने चित्र-पर्वत (चित्रकूट) के ऊपर दुर्ग और चित्रकूट नामक नगर का निर्माण किया।

- **राजविलास का प्रमाण:** मेवाड़ के कवि मान भी अपनी कृति 'राजविलास' में इसकी पुष्टि करते हैं:[44] [45]

"चित्रकोट गढ़ चारु, मंडि चित्रांगद मोरिय। रघू करत तहँ राज, ढाहि अरिजन ढंडोरिय ॥"
संदर्भ: (राजविलास, पृष्ठ 18)
अर्थ: मौर्य राजा चित्रांगद ने सुंदर चित्रकूट (चित्तौड़गढ़) दुर्ग की स्थापना की। वह सूर्यवंशी रघु के समान वहाँ राज्य करता है और शत्रुओं के घमंड तथा शत्रु शक्ति को ढहाकर नष्ट कर देता है।

- मोरी राजाओ के पतन के बाद भी वो राजकीय शासन मे रहे, १५वीं शताब्दी में रचित 'एकलिंग माहात्म्य' में चित्तौड़ के मौर्यों का एक दिलचस्प संदर्भ मिलता है। इस ग्रंथ में मौर्यों ('मौरिक') का उल्लेख सिसोदिया प्रमुख राणा राहप की सेवा करने वाले सामंत कुलों की सूची में किया गया है:[46]

यादव-सैन्धव-दार्भिक-मौरिक-चौलुक्य-चाहुमानामानाख्यः।
मक्तुबांण-हूण-तोमर-परमाराद्यैः संसेव्यते भुवि यः॥
संदर्भ: (एकलिंग माहात्म्य)
अर्थ: इस पृथ्वी पर जिन (राणा राहप) की सेवा यादव, सैंधव, दार्भिक, मौरिक (मौर्य), चौलुक्य, चाहमान, मान, मक्तुबाण, हूण, तोमर तथा परमार आदि द्वारा की जाती है।

2. राजा मान मोरी (मनुराजा) और बप्पा रावल: चित्तौड़ के मौर्यों के अंतिम महान शासक राजा मान मोरी थे, जिन्हें 'मनुराजा' के नाम से भी जाना जाता था। उनके समय के शिलालेख उनके गौरवशाली इतिहास की पुष्टि करते हैं।

- **मानमोरी शिलालेख (713 ईस्वी):** यह राजस्थान के प्रमुख शिलालेखों में से एक है, जिसमें मान मोरी ने अपनी तीन पीढ़ियों का विवरण दिया है: **महाराजा महेश्वर मोरी, राजा भीम मोरी और राजा भोज मोरी**।
- **मानसरोवर झील का निर्माण:** राजा मान ने चित्तौड़ में एक विशाल सरोवर बनवाया था जिसे 'मानसरोवर' कहा जाता है।
- **राजप्रशस्ति शिलालेख (17वीं शताब्दी):** मेवाड़ का यह शिलालेख प्रमाणित करता है कि गुहिल वंश के प्रतापी शासक बप्पा रावल ने मान मोरी को पराजित कर चित्तौड़ प्राप्त किया था:[47]

---

[44] Motilal Menariya, “Maankrit Rajvilas”, 1958, page. 12, page.233
[45] मान कवि, राजविलास, संपादन -लाला भगवानदीन, पृष्ठ 18
[46] Premlata Sharma, Ekalingamahatmya: Ekalingam Mandir Ka Sthalpuran Va Mewar Ke Rajvansh Ka Itihaas, page- 175.

"ततः स निर्जित्य नृपं तु मोरीजातीयभूपं मनुराजसंज्ञम्। गृहीतवांश्चित्रितचित्तकूटं चक्रेऽत्र राज्यं नृप चक्रवर्ती ॥"
संदर्भ: (राजप्रशस्ति शिलालेख, सर्ग 3, श्लोक 18)
अर्थ: इसके पश्चात् (बाप्पा रावल ने) मोरी (मौर्य) वंश के 'मनुराज' (मान मोरी) नामक राजा को पराजित कर, प्राकृतिक सुंदरता से आच्छादित चित्रकूट (चित्तौड़गढ़) दुर्ग को अपने अधिकार में ले लिया और वहाँ एक चक्रवर्ती सम्राट के रूप में अपना राज्य स्थापित किया।

3. कोटा का मौर्य राजवंश: राजा धवल मौर्य: राजस्थान के हाड़ौती क्षेत्र (कोटा) में भी मौर्यों का स्वतंत्र शासन था, जिसका प्रमाण 'कंसवा' और 'डबोक' के शिलालेखों से मिलता है।

- **कंसवा (कोटा) शिलालेख (738 ईस्वी):** यह अभिलेख मौर्य राजा **धवल** का उल्लेख करता है और उन्हें 'मौर्य वंश का प्रतापी राजा' बताता है।[48]

दूराभ्यागतवाहिनीपरिकरो रत्नप्रकारोज्ज्वलः श्रीमानित्थमुदारसागरसमो मौर्यान्वयो दृश्यते ॥ दिग्नागा इव जात्यसम्भृतमुदो दानोज्ज्वलैराननैर्विस्रम्भेण रमन्त्यभीतमनसो मानोद्धुराः सर्वतः । सद्वंशत्ववशप्रसिद्धयशसो यस्मिन्प्रसिद्धा गुणैः श्लाघ्या भद्रतया॥ 5॥
च सत्त्वबहुलाः पक्षैः समं भूभृतः ॥ इत्थं भवत्सु भूपेषु भुञ्जत्सु सकलां महीम् । धवलात्मा नृपस्तत्र यशसा धवलोभवत् ॥ कायादिप्रकटूर्जितैरहरहः स्वैरेव दोषैः सदा निर्वस्त्राः सततक्षुधाः प्रति दिनं स्पष्टीभवद्यातनाः । रात्रिसंचरणा भृशं परगृहेष्वित्थं विजित्यारयो येनाद्यापि नरेन्द्र-॥ 6 ॥
संदर्भ: कंसुआ शिलालेख)
अर्थ: इस मौर्य वंश में जन्मे राजागण, दिग्गजों (दिशाओं के हाथियों) की भाँति, दानशीलता से देदीप्यमान मुखों (जैसे हाथियों का मद-जल) द्वारा अपने आश्रितों के साथ सज्जनों को आनंद से भर देते हैं। वे सर्वत्र निर्भीक मन से और अपने स्वाभिमान में प्रफुल्लित होकर आत्मविश्वासपूर्वक विचरण करते हैं। वे अपने श्रेष्ठ वंश के कारण विख्यात यश वाले, अपने गुणों के लिए प्रसिद्ध, सत्यनिष्ठा (सज्जनता) के लिए प्रशंसनीय और पूर्ण रूप से ओजस्वी (ऊर्जावान) हैं। ऐसे महान और संपूर्ण पृथ्वी पर शासन करने वाले राजाओं के मध्य 'धवल' (पवित्र अंतःकरण वाले) एक राजा हुए, जो अपने यश से देदीप्यमान थे। अपने ही शारीरिक आदि पापों के कारण (जो वे प्रतिदिन स्वयं पर लाते थे), उन्होंने अपने शत्रुओं को पराजित कर उन अधमों को ऐसी स्थिति में पहुँचा दिया कि वे दुष्टात्माओं (पिशाचों) की तरह नग्न, सदैव भूखे, प्रतिदिन अपने दंड को प्रकट करते हुए और बार-बार रात में पराए घरों में भटकते हुए आज भी केवल (नाममात्र के) राजा बने हुए हैं।

- **डबोक (मेवाड़) शिलालेख (644/725 ईस्वी):** उदयपुर के डबोक से प्राप्त यह शिलालेख 'धवलप्पदेव' (धवल) का उल्लेख करता है, जो उस समय के अधिपति थे। इतिहासकार भंडारकर के अनुसार कंसवा और डबोक के 'धवल' एक ही मौर्य सम्राट थे।

4. अन्य मौर्य शासक और सामंत:

- **राजा दुर्गागण:** झालरपाटन (झालावाड़) से प्राप्त 689 ईस्वी के शिलालेख में मौर्य शासक दुर्गागण का उल्लेख मिलता है, जो इस क्षेत्र के शासक थे।
- **पृथ्वीराज रासो के अनुसार:** महाकवि चंदबरदाई ने सम्राट पृथ्वीराज चौहान के सामंतों में **भीमसिंह मौर्य, सरनसिंह मौर्य, मुकुंदराय मौर्य और मदलराय मौर्य** को सूचीबद्ध किया है। यह सिद्ध करता है कि 12वीं शताब्दी तक मौर्य राजस्थान में एक प्रतिष्ठित योद्धा वर्ग के रूप में सक्रिय थे।

---

47 "Rajaprasasti Inscription of Udaipur," Epigraphia Indica, Volume. 29, page. 14.
48 "Kanaswa Stone Inscription of Sivagana; Vikrama-Samvat 795," The Indian Antiquary: A Journal of Oriental Research, Vol. 19 (February 1890), page. 58–60 [*द इंडियन एंटीक्वेरी: ए जर्नल ऑफ ओरिएंटल रिसर्च*, खण्ड 19 (फ़रवरी 1890), पृष्ठ 58–60]

5. चारण साहित्य और ख्यातों का मत:

- **बाँकीदास री ख्यात:** जोधपुर के राजकवि बाँकीदास के अनुसार, मौर्य वंश का उदय इंद्र (इक्ष्वाकु परंपरा का प्रतीक) से हुआ और चित्रांग मोरी ने चित्तौड़ का निर्माण करवाया:[49]

मोरी वंस इंद्रसू प्रकट हुवो। चित्रांग मोरी चित्तौड़ किलो करायो। सीसोदियै रावळ वापै मोरियां कनैसू चित्तौड़ लियो जद मोरी भाज सोरठ देसमू गया।

संदर्भ: (बाँकीदास री ख्यात - गहलोतां री वातां: 957)

अर्थ: मोरी (मौर्य) वंश इंद्र जैसे प्रकट हुवे। चित्रांग मोरी ने चित्तौड़ किले का निर्माण करवाया। जब सिसोदिया रावल बापा (बाप्पा रावल) ने मोरी (मौर्य) शासकों से चित्तौड़ जीत लिया, तब मोरी शासक यहाँ से भागकर सोरठ (सौराष्ट्र/गुजरात) देश चले गए।

उपरोक्त अभिलेखीय और साहित्यिक प्रमाणों से यह निर्विवाद रूप से सिद्ध होता है कि राजस्थान का मौर्य राजवंश इक्ष्वाकु वंशीय क्षत्रियों की ही एक शाखा थी। उन्होंने न केवल राजस्थान की सुरक्षा की, बल्कि अरबी आक्रमणकारियों के विरुद्ध संघर्ष में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई (जैसे राजा धवल मौर्य के समय)।

[49] Banke Das Ri Khyat, Series No. 21 by Rajasthan Puratan Granthmala [बांकीदास आसिया, बांकीदास री ख्यात, संपा. नरोत्तमदास स्वामी, राजस्थान पुरातन ग्रंथमाला, ग्रंथांक 21 (जोधपुर: राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान), "गहलोतांरी बातां", पृष्ठ 87–108]

❖ मथुरा मौर्य राजवंश

मगध के केंद्रीय मौर्य साम्राज्य के पतन के शताब्दियों पश्चात भी भारत के विभिन्न क्षेत्रों में मौर्यों की प्रतापी शाखाएं शासन करती रहीं। उत्तर भारत के ऐतिहासिक नगर मथुरा और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों (दक्षिण-पश्चिमी उत्तर प्रदेश) में मौर्यों की एक शाखा का शासन 7वीं और 8वीं शताब्दी के दौरान प्रमाणित होता है। मथुरा से प्राप्त शिलालेखीय साक्ष्य इस राजवंश की राजकुलीनता और उनकी सैन्य उपलब्धियों का ठोस प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।
मथुरा मौर्य राजवंश के संबंध में महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य और साक्ष्य निम्नलिखित हैं:

1. मथुरा का खंडित मौर्य शिलालेख (7वीं-8वीं शताब्दी): मथुरा से प्राप्त यह अभिलेख इस क्षेत्र में मौर्यों की उपस्थिति का प्राथमिक और सबसे विश्वसनीय स्रोत है। यह शिलालेख मौर्यों की इस शाखा की वंशावली और उनके द्वारा कान्यकुब्ज (कन्नौज) पर किए गए आक्रमण का विवरण देता है। अभिलेख का मूल पाठ इस प्रकार है:

"मौर्य-नृपान्वये नृपतिः श्री कृष्णराजो आर्यराज-नृपतिः श्रीचन्द्रगुप्तात्म तु डिंडीराज इति यः करक्कः प्र : च कान्यकुञ्ज (ब्ज)म अजयं योऽभानि"।
संदर्भ: (मथुरा मौर्य शिलालेख)
अर्थ: मौर्य राजवंश में राजा श्रीकृष्णराज हुए; उनके वंश में राजा आर्यराज हुए, तथा श्री चंद्रगुप्त के आत्मज (पुत्र) डिंडीराज हुए, जिन्होंने कान्यकुब्ज (कन्नौज) नगर को जीतकर उसे दग्ध (जला) दिया था।

2. वंशावली और प्रमुख शासक: इस शिलालेख के माध्यम से मथुरा शाखा के कम से कम तीन (या चार) प्रमुख सदस्यों का पता चलता है:
- **कृष्णराज मौर्य:** इस शाखा के ज्ञात प्रथम प्रतापी राजा।
- **चंद्रगुप्त (द्वितीय):** यह नामकरण उनके महान पूर्वज सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के प्रति उनकी श्रद्धा और वंशानुगत निरंतरता को दर्शाता है।
- **आर्यराज**
- **डिंडीराज मौर्य (कर्क):** इस वंश का सबसे प्रतापी शासक, जिसने कन्नौज जैसे शक्तिशाली राज्य पर विजय प्राप्त की।

3. ऐतिहासिक उपलब्धियां: कन्नौज पर विजय: मथुरा के मौर्य केवल एक छोटे स्थानीय शासक नहीं थे, बल्कि एक 'दुर्जेय शक्ति' थे। डिंडीराज मौर्य ने कन्नौज के राजा के विरुद्ध युद्ध किया और उस समृद्ध नगर को अग्नि के हवाले कर उसे विजित किया। यह घटना मौर्यों की पुनरुत्थानवादी शक्ति का संकेत देती है, जो गुप्तोत्तर काल में भी क्षेत्रीय राजनीति में निर्णायक भूमिका निभा रहे थे।

4. अन्य मौर्य शाखाओं से संबंध: इतिहासकारों, विशेषकर डॉ. डी.सी. सरकार का मत है कि मथुरा के ये मौर्य राजस्थान और मालवा (कोटा) में शासन करने वाली मौर्य शाखा (जैसे राजा धवल मौर्य) के निकट संबंधी थे। लेखों की लिपि में समानता और भौगोलिक समीपता इस तथ्य को पुष्ट करती है कि उत्तर-पश्चिमी भारत और मथुरा के मौर्य एक ही राजकुल के अंग थे।

5. जैन परंपरा और यशोवर्मन का संबंध: जैन ग्रंथों की परंपराओं के अनुसार, कन्नौज के प्रसिद्ध सम्राट यशोवर्मन (725-753 ईस्वी) को भी प्राचीन चंद्रगुप्त मौर्य का वंशज बताया गया है। यह संभव है कि यशोवर्मन का डिंडीराज मौर्य और उनके पूर्वजों के साथ सीधा रक्त-संबंध रहा हो, जो मथुरा शिलालेख में वर्णित मौर्यों के कन्नौज पर आधिपत्य को स्पष्ट करता है।

मथुरा का मौर्य राजवंश प्राचीन मौर्य साम्राज्य की उस जीवंत विरासत का प्रतीक है, जिसने मध्यकाल के प्रारंभ तक अपनी क्षत्रिय गरिमा और सैन्य सामर्थ्य को बनाए रखा। 'आर्यराज' जैसे विशेषणों का प्रयोग और कन्नौज जैसी महाशक्ति पर विजय उनके गौरवशाली इतिहास की पुष्टि करती है।

❖ कश्मीर मौर्य राजवंश

मौर्य साम्राज्य की सत्ता न केवल मगध के केंद्र तक सीमित थी, बल्कि उत्तर के दुर्गम हिमालयी क्षेत्रों, विशेषकर कश्मीर घाटी में भी इस राजवंश का गहरा ऐतिहासिक प्रभाव था। कल्हण की 'राजतरंगिणी' कश्मीर के मौर्य इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण और विस्तृत स्रोत है, जिसमें सम्राट अशोक और उनके उत्तराधिकारी जलौक के शासन का सप्रमाण विवरण मिलता है। स्रोतों के अनुसार, कश्मीर में मौर्यों का शासन राजनैतिक सुदृढ़ता के साथ-साथ सांस्कृतिक और धार्मिक परिवर्तनों का भी काल था।
इस क्षेत्र के मौर्य इतिहास के प्रमुख ऐतिहासिक बिंदु और प्रमाण निम्नलिखित हैं:

1. सम्राट अशोक और कश्मीर का संबंध: प्राचीन स्रोतों के अनुसार, कश्मीर मौर्य साम्राज्य का एक अभिन्न अंग था और सम्राट अशोक को ही श्रीनगर का संस्थापक माना जाता है।

- **श्रीनगर की स्थापना:** 'राजतरंगिणी' और अन्य स्थानीय परंपराओं के अनुसार, सम्राट अशोक ने ही आधुनिक श्रीनगर (सिरनगर) नगर को बसाया था।
- **धार्मिक निर्माण:** अशोक ने कश्मीर में बौद्ध धर्म के प्रचार के साथ-साथ शिव मंदिरों का भी निर्माण करवाया। 'राजतरंगिणी' के अनुसार, उन्होंने विजयेश्वर के समीप दो शिव मंदिरों का निर्माण करवाया था जिन्हें 'अशोकेश्वर' कहा गया:

"सभायां विजयेशस्य समीपे च विनिर्ममे । शान्तावसादः प्रासादा अशोकेश्वर संज्ञिती ॥१०६॥"
संदर्भ: (राजतरंगिणी: तरंग 1: श्लोक 106)
अर्थ: राजा अशोक ने विजयेश्वर की सभा के निकट दो शांत और भव्य मंदिरों का निर्माण करवाया, जिन्हें 'अशोकेश्वर' के नाम से जाना गया।

- **स्तूपों का निर्माण:** कल्हण के अनुसार, अशोक ने कश्मीर की रिक्त भूमि को स्तूपों और मंडलों से सुसज्जित किया था:

"शुष्क लेत्रवितस्तात्रौ तस्वार स्तूपमण्डलैः ॥१०२॥" संदर्भ: (राजतरंगिणी: तरंग 1: श्लोक 102)

2. सम्राट जलौक (अशोक के पुत्र और कश्मीर के स्वतंत्र शासक): सम्राट अशोक की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र जलौक ने कश्मीर के स्वतंत्र शासक के रूप में बागडोर संभाली।

- **स्वतंत्रता की घोषणा:** प्रारंभ में जलौक कश्मीर के राज्यपाल के रूप में नियुक्त थे, परंतु अशोक के पश्चात उन्होंने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर दिया और मगध के केंद्रीय शासन से संबंध विच्छेद कर लिया।
- **विजेता के रूप में:** कल्हण ने जलौक को 'म्लेच्छों' का संहारक और संपूर्ण पृथ्वी का विजेता बताया है। उनके सैन्य अभियान कान्यकुब्ज (कन्नौज) तक विस्तृत थे।
- **'महाशाक्य' संबोधन:** 'राजतरंगिणी' में जलौक को स्पष्ट रूप से 'महान शाक्य नृपति' कहा गया है, जो उनके मौर्य (शाक्य) वंशज होने की पुष्टि करता है:

"महाशाक्यः स नृपतिर्न शक्यो बाधितुं त्वया। तस्मिन्दृष्टे तु कल्याणि भविता ते तमःक्षयः ॥"
संदर्भ: (राजतरंगिणी: तरंग 1: श्लोक 141)
अर्थ: यह राजा (जलौक) 'महाशाक्य' है, इसे बाधित करना संभव नहीं है।

3. जलौक का धार्मिक दृष्टिकोण और वर्णाश्रम व्यवस्था: जलौक एक कट्टर 'शैव' मतानुयायी थे, हालांकि बाद में उनका झुकाव बौद्ध धर्म की ओर भी हुआ।

- **शैव धर्म:** वे भगवान शिव के 'विजयेश्वर' और 'भूतेश' रूपों के उपासक थे। उनके गुरु एक सिद्ध शैव विद्वान थे, जिन्होंने बौद्ध वादियों को शास्त्रार्थ में पराजित किया था,:

"तत्कालप्रबलप्रेद्धबौद्धवादिसमूह जित् अवधूतोऽभवत्सिद्धस्तस्य ज्ञानोपदेशकृत् ॥११२॥"
संदर्भ: (राजतरंगिणी: तरंग 1: श्लोक 112)

- **वर्णाश्रम की स्थापना:** कश्मीर में जलौक ने पुनः वर्णाश्रम व्यवस्था को सुदृढ़ किया। उन्होंने बाद में 'कीर्ति आश्रम विहार' नामक बौद्ध विहार का भी निर्माण करवाया, जो उनकी धार्मिक सहिष्णुता को दर्शाता है।

4. वंशावली और उत्तराधिकार: जलौक के पश्चात उनका पुत्र दामोदर द्वितीय कश्मीर का शासक बना।

- **दामोदर द्वितीय:** कल्हण के अनुसार, अशोक के कुल में उत्पन्न जलौक के पश्चात दामोदर नामक राजा भूमि का रक्षक हुआ:

  "अथाऽशोककुलोत्पन्नोयद्वाऽन्याभिजनोद्भवः । भूमि दामोदरो नाम जुगोप जगतीपतिः ।। १५३ ॥"

  संदर्भ: (राजतरंगिणी: तरंग 1: श्लोक 153)

5. आधुनिक ऐतिहासिक विमर्श:

- **पहचान का प्रश्न:** कुछ आधुनिक इतिहासकार (जैसे रोमिला थापर) 'जलौक' की पहचान अशोक के पुत्र 'कुणाल' से करते हैं, उनका मानना है कि ब्राह्मी लिपि की त्रुटि के कारण 'कुणाल' शब्द 'जलौक' के रूप में पढ़ा गया होगा।
- **सुभगसेन (Sophagasenus):** ग्रीक इतिहासकार पॉलीबियस द्वारा वर्णित भारतीय राजा 'सुभगसेन' को भी कुछ विद्वान जलौक की ही एक उपाधि अथवा उनके वंशज के रूप में देखते हैं।

कश्मीर का मौर्य इतिहास यह प्रमाणित करता है कि मौर्य राजवंश की एक शक्तिशाली शाखा ने सदियों तक हिमालय के अंचल में शासन किया। 'राजतरंगिणी' में मौर्यों को इक्ष्वाकु वंशीय राजा 'सकुनि' के कुल से संबंधित बताना उनके क्षत्रिय गौरव की पुनः पुष्टि करता है।

❖ कोंकण मौर्य राजवंश

मगध के केंद्रीय मौर्य साम्राज्य के ह्रास के उपरांत, मौर्यों की एक प्रतापी और सामरिक रूप से सुदृढ़ शाखा ने भारत के पश्चिमी तट (कोंकण क्षेत्र) पर अपनी सत्ता स्थापित की। इतिहासकारों, विशेषकर **डी. सी. सरकार (1942)** के अनुसार, कोंकण के इन मौर्यों ने स्पष्ट रूप से मगध के 'शाही मौर्य राजवंश' के वंशज होने का दावा किया है। यह राजवंश लगभग चौथी शताब्दी से सातवीं शताब्दी के आरंभ तक उत्तरी कोंकण (ठाणे) से लेकर दक्षिणी कोंकण (गोवा) तक शासन करता रहा।

1. राजधानी: पुरी (घारापुरी/एलिफेंटा द्वीप) कोंकण मौर्यों की राजधानी 'पुरी' थी, जिसकी पहचान वर्तमान मुंबई के समीप **एलिफेंटा द्वीप (घारापुरी)** से की जाती है।

- **पुरातात्विक अवशेष:** द्वीप पर **'मोरबंदर'** (मौर्य बंदरगाह) और **'राजबंदर'** (शाही बंदरगाह) नामक स्थान आज भी मौर्य शासन के अवशेषों के रूप में विद्यमान हैं।
- **सांस्कृतिक गौरव:** चालुक्य अभिलेखों में पुरी को "पश्चिमी महासागर के भाग्य की देवी" के रूप में वर्णित किया गया है, जो इसकी समृद्धि और अद्वितीय स्थिति का परिचायक है।

2. उत्तरी कोंकण शाखा: महाराज सुकेतुवर्मन उत्तरी कोंकण (ठाणे जिला) में मौर्य शासन का सबसे ठोस प्रमाण **'वडा पत्थर शिलालेख'** है।[50]

- **शिलालेख संदर्भ:** यह अभिलेख ठाणे के उत्तर में 'वडा' से प्राप्त हुआ है (जो वर्तमान में प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम, मुंबई में सुरक्षित है)।
- **कालक्रम:** यह शक संवत 322 (अर्थात **400 ईस्वी**) का है और दक्षिणी लिपि में उत्कीर्ण है।
- **धार्मिक योगदान:** इसमें मौर्य 'धर्म-महाराज' सुकेतुवर्मन के शासनकाल में **कोटेश्वर (कोटिश्वर), वशिष्ठेश्वर और सिद्धेश्वर** जैसे हिंदू मंदिरों के निर्माण का उल्लेख है। अभिलेख के अनुसार, कुमारदत्त के पुत्र सिंहदत्त ने कोटेश्वर देवता की प्रतिमा स्थापित की थी। यह अभिलेख कुछ इस प्रकार अपनी शुरवात करता है :[51]

भो जनां मौर्यधर्ममहाराजश्रीसुकेतुवर्मणो वल्लभतलवरेण ईशप्रक्किना दत्तः
आनङ्किपरदत्तपुत्रेण सिंहदत्तेन कोटीश्वर स्थापनाय
संदर्भ: (वाडा अभिलेख)

अर्थ: मौर्य वंश के धर्ममहाराज श्री सुकेतुवर्मा के शासनकाल में, राजा के प्रमुख अधिकारी (वल्लभ-तलवर) ईशप्रक्कि द्वारा, आनङ्किपरदत्त के पुत्र सिंहदत्त द्वारा भगवान कोटीश्वर (शिव) की स्थापना हेतु यह (दान-लेख) दिया जाता है...

- वाडा शिलालेख की इस पहली पंक्ति के में अलग-अलग अर्थ निकाले जाते हैं, जो 'भोजाणां' और 'भो जनां' के पाठ-भेद पर आधारित हैं। अगर इस शब्द को 'भोजाणां' पढ़ा जाता है, तो इसका राजनीतिक अर्थ निकलता है कि राजा सुकेतुवर्मा मूल रूप से मौर्य वंश के थे, लेकिन उनका शासन भोज राज्य पर भी था। कुछ इतिहासकारों के अनुसार इसका तात्पर्य यह भी हो सकता है कि सुकेतुवर्मा का जन्म मौर्य और भोज राजवंशों के बीच हुए किसी वैवाहिक संबंध से हुआ था जिसमे उनके पिता मौर्य और माता भोज कुमारी रही होंगी। दूसरी ओर, यदि इसे 'भो जनां' (या 'भो जनाः') पढ़ा जाए, तो यह केवल जनता को किया गया एक सार्वजनिक संबोधन बन जाता है, जिसका अर्थ 'हे लोगों!' या 'ओ प्रजाजनों!' होता है। इस स्थिति में अभिलेख में भोज राजवंश का कोई उल्लेख नहीं रह जाता, बल्कि यह प्राचीन दान-पत्रों की तरह जनता को संबोधित करते हुए आदेश जारी करने की एक सामान्य शैली बन जाती है।

---

[50] Gazetteer of Bombay Presidency, Volume XIII, part II, page 420.

[51] Uttankita Sanskrit Vidya Aranya Epigraphs, Volume. 3 (Kancheepuram: Uttankita Vidya Aranya Trust, 2002), page 91–92.

3. दक्षिणी कोंकण (गोवा) शाखा: महाराज अनिर्जितवर्मन एवं चंद्रवर्मन 6ठी और 7वीं शताब्दी के दौरान मौर्यों ने गोवा क्षेत्र पर शासन किया, जिसकी पुष्टि दो प्रमुख ताम्रपत्रों से होती है।

- **महाराज अनिर्जितवर्मन (बंदोरा ताम्रपत्र):**
  - **स्थान:** यह अभिलेख **'कुमारद्वीप'** (आधुनिक कुम्बारजुआ) से जारी किया गया था। यह अभिलेख 'कुमारद्वीप' (जिसकी पहचान आधुनिक गोवा के कुम्बारजुआ या कुम्बरजुवे द्वीप से की जाती है) से जारी किया गया था। यह स्थान उस समय मौर्यों के शासन का एक प्रमुख केंद्र था।
  - **दान विवरण:** राजा ने **'द्वदास-देश'** (आधुनिक बर्देज़) के हारिती गोत्र के विद्वान **सामवेदी ब्राह्मण 'हस्त्यार्या'** को कर-मुक्त भूमि (हाला) दान में दी थी।
  - **प्रशासनिक निर्देश:** राजा ने ब्राह्मण को निर्देश दिया था कि वह उस आर्द्रभूमि (खज्जाना) पर बांध बनाकर उसे कृषि योग्य बनाए। इसमें एक पुराने अनाम 'राष्ट्रकूट' (अधिकारी) की भूमि का भी संदर्भ मिलता है।

बंदोरा ताम्रपत्र लेख की शुरुआत में ही अनिर्जितवर्मन को 'मौर्य महाराज' की गरिमामयी उपाधि से संबोधित किया गया है। अभिलेख की प्रथम पंक्ति का पाठ इस प्रकार है:[52]

"दित्थं दृष्टं विजय कुमारद्वीपान् मौर्य महाराजस्य श्रीमद् अनिर्जितवर्मनों वचनात"

संदर्भ: (बंदोरा ताम्रपत्र लेख)

अर्थ: विजय की भूमि 'कुमारद्वीप' से मौर्य महाराज श्रीमान अनिर्जितवर्मन की आज्ञा (वचन) से...।

- **महाराज चंद्रवर्मन:** इनका अभिलेख खंडित है, जिसमें **शिवपुरा** (गोवा) स्थित 'महाविहार' को भूमि दान देने का उल्लेख प्राप्त होता है।

4. अर्थव्यवस्था और समुद्री सामर्थ्य: 'खज्जाना' प्रणाली कोंकण मौर्यों की आर्थिक शक्ति का आधार उन्नत कृषि और समुद्री व्यापार था।

- **खज्जाना प्रणाली:** मौर्यों ने समुद्र के खारे पानी को खेतों में घुसने से रोकने के लिए तटीय क्षेत्रों में **तटबंधों** का निर्माण करवाया, जिसे 'खज्जाना' कहा जाता था।
- **व्यापारिक केंद्र:** मौर्यों ने पोंडा और कुर्दी जैसे क्षेत्रों में सीमा शुल्क चौकियों की स्थापना की थी, जो उनके सुदृढ़ आर्थिक नियंत्रण को दर्शाती है।

5. मौर्य-चालुक्य संघर्ष और राजवंश का अंत सातवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बादामी के चालुक्यों के साथ हुए भीषण संघर्ष में कोंकण मौर्यों की स्वतंत्र सत्ता समाप्त हुई।

- **कीर्तिवर्मन प्रथम:** चालुक्य अभिलेखों में कीर्तिवर्मन प्रथम को मौर्यों के लिए "कयामत की रात" कहा गया है। मौर्य पश्चिमी घाट के कोंकण क्षेत्र पर शासन था। इनकी राजधानी पुरी (एलीफैंटा के समीप धारापुरी) को 'पश्चिमी समुद्र की लक्ष्मी' कहा गया है।
- **पुलकेशिन द्वितीय और ऐहोल शिलालेख (634 ई.):** पुलकेशिन द्वितीय ने मौर्यों की अंतिम शक्ति को कुचला। उनके दरबारी कवि रविक़ीति ने **'ऐहोल शिलालेख'** में मौर्यों की पराजय का ओजस्वी वर्णन किया है:[53]

नलमौर्यकदम्बकालरात्रिः स्तनयस्तस्य बभूव कीर्तिवर्म्मा।परदारनिवृत्तचित्तवृत्तेरपि धीर्यस्य रिपुश्रीयानुकृष्टा॥ ९॥
पुनरपिचजघृक्षोस्सैन्यमाक्क्रान्तयालम् रूचिरबहुपताकं रेवतीद्वीपमाशु। सपादि
महदुदन्वत्तीयसंक्कक्रान्तबिम्बिम् वरुणंबलमिवाभूदागतं यस्य वाचा॥ १३ ॥
कोंकणेषुयदादिष्ट चण्डदण्डाम्बुब्रीचिभिः । उदस्तरसा मौर्यपल्लवलाम्बुसमृद्धये ॥ २० ॥

संदर्भ: (ऐहोल शिलालेख, पंक्ति 9, 13 और 20)

अर्थ: ९ – उनके पुत्र 'कीर्तिवर्मन' हुए, जो नल, मौर्य और कदम्ब राजाओं के लिये कालरात्रि समान थे। पर स्त्रियों की ओर से चित्त को हटा लेने पर भी जिनकी बुद्धि को शत्रु लक्ष्मी आकर्षित कर लिया था। १३ – पुनः उसने रेवती द्वीप (गोवा) को विजित करने की इच्छा से अनेक ध्वजाओं से युक्त सेना के द्वारा घेर लिया। उसकी विशाल सेना का प्रतिबिम्ब समुद्र में पड़ता हुआ प्रतीत होता था। मानो वरुण उसकी (मंगलेश) आज्ञा पाकर अपनी सेना लेकर आ गया हो। २० – उसने कोंकण में जिसकी प्रचण्ड सेनारूपी जल की तरंगों ने मौर्य रूपी लघु जलाशय को बहा दिया।

---

[52] Epigraphia Indica, Volume. 33, Issue no. 54, page. 293–296 (Bandora Plates of Maurya Anirjitavarman).

[53] Vishuddhanad Pathak, दक्षिण भारत का इतिहास, पृष्ठ 46-65.

- **नौसैनिक घेराबंदी:** अभिलेख के अनुसार, पुलकेशिन ने **सैंकड़ों युद्धपोतों (जहाजी सेना)** से मौर्य राजधानी 'पुरी' को घेरा, जिससे आकाश बादलों के समान जहाजों से भर गया था।

6. नेसारिका अभिलेख (805 ई.) में उल्लिखित "मौर्य" 8वीं-9वीं शताब्दी के उत्तरकालीन मौर्य हैं। मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद भी मौर्य वंश की कुछ छोटी शाखाएं पश्चिमी भारत में शासन करती रहीं।

- 8वीं शताब्दी तक ये मौर्य शासक केवल क्षेत्रीय राजा या चालुक्य और राष्ट्रकूट राजवंशों के अधीन सामंत बनकर रह गए थे।
- नेसारिका अभिलेख में गोविन्द तृतीय की साम्राज्यवादी विजयों और उनके प्रभुत्व का वर्णन है। जब राष्ट्रकूट सम्राट गोविन्द तृतीय ने उत्तर और दक्षिण भारत में अभियान चलाए, तो इन मौर्य शासकों (साथ ही चालुक्यों) ने उनकी अधीनता स्वीकार की या वे युद्ध में पराजित हुए।[54]

पाण्ड्यदेशाधिपान्मत्स्यं वृषभं पल्लवेश्वरात् चोलाद्व्याघ्रं गजं गङ्गाच्चापयष्टिं च केरलात् आन्ध्र॥35॥
चालुक्यमौर्येभ्यो वाराहं गूर्ज रेश्वरात् फलकं प्रतिवधार्यं वृषभं पल्लवेश्वरात् कोसला वन्तिनाथाभ्यां ॥36॥
सिंहलादपि नामकम् तारां भगवतीं ख्यातां धर्माद्वङ्गालभूमिपात् ॥37॥
संदर्भ: (नेसारिका अभिलेख)

अर्थ: राष्ट्रकूट सम्राट गोविन्द तृतीय ने - पाण्ड्य देश के राजा से मत्स्य (मछली) का राजचिह्न, पल्लव नरेश से वृषभ (बैल) का चिह्न, चोल राजा से व्याघ्र (बाघ), (पश्चिमी) गंगा राजा से हाथी तथा केरल नरेश से धनुष (चाप-यष्टि) प्राप्त किया। आन्ध्र (पूर्वी चालुक्य), चालुक्य और मौर्य राजाओं से वाराह (सूअर) का चिह्न, गूर्जरेश्वर (गूर्जर-प्रतीहार राजा) से फलक (नगाड़ा/ढाल अंकित पट्ट) तथा पल्लव नरेश से (पुनः) वृषभ प्राप्त किया। कोशल, अवन्ति के राजाओं और सिंहल (श्रीलंका) के शासक से नामकम (उनकी उपाधियां/राजकीय नाम) प्राप्त किए; तथा वङ्गाल (बंगाल) के राजा धर्म (पालवंशी शासक धर्मपाल) से प्रसिद्ध 'भगवती तारा' देवी का राजकीय प्रतीक प्राप्त किया।

अभिलेख में उल्लेख है कि गोविन्द तृतीय ने इन मौर्य राजाओं से 'वराह' (वाराह/सूअर) का राजचिह्न प्राप्त किया। प्राचीन भारतीय इतिहास में किसी राजा का राजचिह्न या ध्वज प्राप्त करना उस पर पूर्ण विजय और सार्वभौम सम्राट होने का प्रतीक माना जाता था।

कोंकण का मौर्य राजवंश मगध की उच्च कुलीन क्षत्रिय परंपरा का उत्तराधिकारी था, जिसने पश्चिमी तट पर लगभग चार शताब्दियों तक एक स्वतंत्र समुद्री महाशक्ति के रूप में शासन किया। उनकी पराजय के लिए चालुक्यों को एक विशाल जहाजी बेड़े की आवश्यकता पड़ी, जो मौर्यों के सामर्थ्य और उनके 'दुर्जेय शक्ति' होने का सबसे बड़ा प्रमाण है। इसके उपरांत भी मौर्य माहिष्मती के प्रारंभिक कलचुरियों के सामंतों (अधीनस्थ शासकों) के रूप में वहीं से शासन कर रहे थे।

[54] Epigraphia Indica, Volume. 34, Issue No. 19, page. 131 (एपिग्राफिया इंडिका, खण्ड 34, संख्या 19, पृष्ठ 131)।

❖ महाराष्ट्र मौर्य राजवंश

मगध के साम्राज्य के विकेंद्रीकरण के पश्चात मौर्यों की कई शाखाएं पश्चिमी और मध्य भारत में स्थापित हुईं। महाराष्ट्र के संदर्भ में, मौर्यों की उपस्थिति विशेष रूप से दो क्षेत्रों में अत्यंत प्रभावशाली रही: प्रथम 'कोंकण' (जिसका विवरण पूर्व में दिया जा चुका है) और द्वितीय 'खानदेश' (उत्तरी महाराष्ट्र)। खानदेश के मौर्यों ने न केवल अपनी स्वतंत्र पहचान बनाए रखी, बल्कि 11वीं शताब्दी तक वे एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में विद्यमान रहे।[55]
महाराष्ट्र मौर्य राजवंश (विशेषकर खानदेश शाखा) के प्रमुख साक्ष्य और ऐतिहासिक विवरण निम्नलिखित हैं:

1. खानदेश के मौर्य और वाघली शिलालेख (1069 ईस्वी)
महाराष्ट्र के जलगाँव जिले में स्थित **'वाघली'** से प्राप्त शिलालेख इस शाखा के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण आधार है। यह शिलालेख मौर्य राजा **गोविन्दराज** के समय का है, जो उस समय के प्रारंभिक यादव राजा 'सेउनाचन्द्र द्वितीय' के अधीनस्थ सामंत के रूप में शासन कर रहे थे।

- **मूल पाठ एवं सूर्यवंशीय मूल:** इस अभिलेख की शुरुआत में मौर्यों को स्पष्ट रूप से 'सूर्यवंशी' और चक्रवर्ती सम्राट 'मान्धाता' का वंशज बताया गया है:

"सुतः कश्यपोभू - तदनु मनुरभूत्तत्द्युतात्सूर्यवंशः। विख्यातः सर्वलोकेष्वमल नृपगुणैरन्वितःकीर्तिधर्मौम्मान्धातुर्भूमिपालात्स कलगुणनिधेन्मौर्य वंशोव बभूव ॥ १ ॥

अर्थ: कश्यप पुत्र (विवस्वान) के पश्चात मनु हुए, जिनसे उज्ज्वल सूर्यवंश उत्पन्न हुआ। उस वंश में कीर्ति और धर्म के धनी राजा मान्धाता हुए, जिनसे मौर्य वंश का उद्भव हुआ।

- **राजवंश की प्राचीनता:** अभिलेख में गोविन्दराज से पूर्व **बीस (20) मौर्य राजकुमारों** का उल्लेख है, जो इस क्षेत्र में उनके शासन की दीर्घायु को दर्शाता है।
- **प्रथम सदस्य – कीकट :** इस शाखा के सबसे पहले ज्ञात सदस्य का नाम 'कीकट' बताया गया है:

"श्रीकीकट प्रवरमौर्य कुलग्रप्रसूतः"।

2. राजधानी और मूल स्थान: वल्लभी
अभिलेख की चौथी पंक्ति में मौर्यों की राजधानी का संदर्भ प्राप्त होता है: **"मौर्याणां राजधानी वलभिरिति"**।

- **ऐतिहासिक विश्लेषण:** प्रसिद्ध इतिहासकार **डी. सी. सरकार** के अनुसार, इन खानदेशी मौर्यों का मूल स्थान और उनकी प्राचीन राजधानी सौराष्ट्र (गुजरात) की प्रसिद्ध नगरी **'वल्लभी'** थी। वहाँ से विस्थापित होकर उन्होंने महाराष्ट्र के खानदेश क्षेत्र में अपनी नई सत्ता स्थापित की।

3. धार्मिक एवं स्थापत्य योगदान
महाराष्ट्र के मौर्य शासक महान निर्माता और धर्मनिष्ठ थे।

- **शिव मंदिर का निर्माण:** वाघली का यह महत्वपूर्ण शिलालेख एक शिव मंदिर (मुधाई देवी मंदिर के परिसर में) से प्राप्त हुआ था।
- **धर्म:** यद्यपि सम्राट अशोक के प्रभाव में मौर्यों ने बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया था, किंतु महाराष्ट्र की यह शाखा परवर्ती काल में **शैव मतानुयायी** हो गई थी, जैसा कि शिव मंदिर के निर्माण और शिलालेख के मंगलाचरण से स्पष्ट है।

4. राजनैतिक संबंध एवं स्थिति

- **यादव-मौर्य गठबंधन:** 11वीं शताब्दी में मौर्य राजा गोविन्दराज ने यादव राजा **सेउनाचन्द्र द्वितीय** की अधीनता स्वीकार की थी। उस समय मौर्य एक 'महामंडलेश्वर' या सामंत राजा के रूप में खानदेश क्षेत्र का प्रशासन संभाल रहे थे।
- **विस्तार:** उनका प्रभाव क्षेत्र आधुनिक जलगाँव और उसके आसपास के वन प्रदेशों तक विस्तृत था।

---

[55] G. S. Gai, "The Later Mauryas in Indian History," The Indian Historical Quarterly, Volume 37, page. 240–245 (द इंडियन हिस्टोरिकल क्वार्टरली, खण्ड 37, पृष्ठ 240–245)।

5. जावली के मौर्य (मोरे)

- जावली के प्रांतीय शासक **चंद्रराव मोरे** अपने आपको प्राचीन मौर्यवंश का वंशज बताते थे। पाँचवीं शताब्दी ईस्वी के अंत में मोरिया नामक एक राजवंश कोंकण पर शासन करता था। ये मोरे सम्राट अशोक के मौर्यवंश की एक शाखा थे, जिन्होंने मौर्य साम्राज्य के विघटन के बाद कोंकण में स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर ली थी। इसी आधार पर यह समझना कठिन नहीं है कि जावली के मोरे स्वयं को कोंकण के इन शाही मोरिया शासकों तथा उनसे भी प्राचीन मगध के मौर्यवंश का वंशज मानते थे।
- इतिहासकर जदुनाथ सरकार के अनुसार, चंद्रराव की वंशानुगत उपाधि प्राप्त करने वाले प्रारंभिक मोरे प्राचीन मौर्य वंश से आए थे, जिसके पूर्वजों ने दक्कन के मध्य भाग तथा तेलंगाना में विजयनगर सम्राटों के अधीन युद्ध किया था और बाद में आदिलशाह के अधीन राज किया। चंद्रराव मोरे ने शिवाजी के उदय के समय उनका विरोध किया और आदिलशाही के पक्ष में शिवाजी के विरुद्ध युद्ध में भाग लिया।[56]
- फ़ुतूहात-ए-आलमगीरी (Futuhat-i-Alamgiri), जो ईश्वरदास नागर द्वारा रचित समकालीन मुगल इतिहास है, में मराठा प्रमुख **बाबाजी मौर्य** द्वारा बीजापुर के सेनापति रुस्तम ख़ान की पराजय का उल्लेख मिलता है।[57]

6. अन्य शाखाओं से तुलना

महाराष्ट्र के मौर्यों का कोंकण शाखा (राजधानी पुरी/एलिफेंटा) से गहरा सांस्कृतिक संबंध था जो की उनकी राजधानी थी।[58] कोंकण के मौर्य जहाँ अपनी नौसैनिक शक्ति के लिए जाने जाते थे, वहीं खानदेश के मौर्य अपनी प्रशासनिक निरंतरता और प्राचीन क्षत्रिय परंपराओं के निर्वहन के लिए विख्यात थे।

महाराष्ट्र का मौर्य राजवंश प्राचीन मगध साम्राज्य की उस अखंड परंपरा का प्रतिनिधि है जो राष्ट्रकूट और चालुक्य काल के उतार-चढ़ाव के बाद भी जीवित रही। वाघली शिलालेख यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि मौर्यों ने सदैव स्वयं को इक्ष्वाकु वंशीय क्षत्रिय माना और 11वीं शताब्दी तक महाराष्ट्र की राजनीति में अपना सम्मानजनक स्थान बनाए रखा।

---

[56] जदुनाथ सरकार, शिवाजी एंड हिज़ टाइम्स (Shivaji and His Times), पृष्ठ 35। मोरिय/मोरिया (मौर्य) परिवार के कोंकण पर शासन से संबंधित प्रमाणों के लिए सरकार ने बॉम्बे गजेटियर, खंड 1, भाग 2, पृष्ठ 282–284, 541 का भी संदर्भ दिया है।

[57] ईश्वरदास नागर द्वारा (अनुवादित) Futuhat-i-Alamgiri , पृष्ठ 240

[58] Gazetteer of the Bombay presidency(1882), पृष्ठ 96

❖ श्रीलंका मौर्य राजवंश

श्रीलंका (प्राचीन सिंहल द्वीप) के इतिहास में मौर्य राजवंश की उपस्थिति और प्रभाव अत्यंत गहरा और दीर्घकालिक रहा है। मौर्यों का श्रीलंका के साथ संबंध केवल कूटनीतिक नहीं था, बल्कि यह रक्त-संबंधों, धार्मिक प्रसार और राजनैतिक वंशावली के विलय का एक अनूठा उदाहरण है। सम्राट अशोक के समय से प्रारंभ हुआ यह संबंध मध्यकाल तक बना रहा, जहाँ मौर्य वंश की एक शाखा ने वहाँ के राजनैतिक और धार्मिक जीवन में निर्णायक भूमिका निभाई।

श्रीलंका मौर्य राजवंश के संबंध में प्रमुख शोधपरक तथ्य और साक्ष्य निम्नलिखित हैं:

1. मौर्य वंश का विस्तार और महेंद्र-संघमित्रा का आगमन: श्रीलंका में मौर्य प्रभाव की नींव सम्राट अशोक के शासनकाल में पड़ी। अशोक ने अपने पुत्र महेंद्र (महमिंद) और पुत्री संघमित्रा को धम्म के प्रचार के लिए वहाँ भेजा था।

- **अट्टकथा साक्ष्य:** लंका के अनुराधापुर के 'अभयगिरि-विहार' (जिसे 'उत्तरविहार' भी कहा जाता था) में रहते हुए सम्राट अशोक के पुत्र महेंद्र ने **'उत्तरविहार-अट्टकथा'** की रचना की थी। यह ग्रंथ मौर्यों की वंशावली और श्रीलंका में उनके आगमन का प्राथमिक स्रोत माना जाता है। इसमें स्पष्ट उल्लेख है कि मौर्यों का मूल संबंध शाक्य कुल और आदित्य गोत्र (सूर्यवंश) से था।

2. विद्वान राहुल मुनि और मौर्य कुल का गौरव: श्रीलंका के मध्यकालीन इतिहास में मौर्य कुल से उत्पन्न विद्वान **राहुल मुनि** का नाम अत्यंत आदर के साथ लिया जाता है। उन्होंने वहाँ के प्रसिद्ध राजा पराक्रमबाहू को दीक्षा दी थी।

"राहुलनामा मुनिरति विद्वान पड्गुणमारी त्रिपिटकधारी । मौर्य्यकुलाब्धिप्रभवसुधांशु जैन्मनि जन्मन्यपि मम मित्रम ॥"

अर्थ: मौर्य रूपी क्षीरसागर से उत्पन्न चंद्रमा के समान, त्रिपिटक के ज्ञाता और षडगुणों के स्वामी विद्वान श्री राहुल मुनि जन्म-जन्मान्तर तक मेरे मित्र बने रहें।

3. स्कंधवारा वंश की उत्पत्ति: ऐतिहासिक शोधों से पता चलता है कि राहुल मुनि के प्रभाव और मौर्यों की उपस्थिति के कारण ही श्रीलंका में एक नया राजवंश अस्तित्व में आया, जिसे **'स्कंधवारा'** वंश कहा गया।

- राहुल मुनि के शिष्य और उनके वंशज कालान्तर में 'स्कंध' या 'स्कंधवारा' कहलाने लगे, जिन्होंने श्रीलंका की राजनीति में महत्वपूर्ण पद संभाले।

4. मौर्यों का राजनैतिक आधिपत्य (लंबकर्ण और मोरिया वंश): श्रीलंका के इतिहास ग्रंथ 'महावंश' और 'चुलवंश' के अनुसार, वहाँ के शासन पर **'मोरिया'** (मौर्य) वंश का स्पष्ट नियंत्रण रहा है।

- श्रीलंका के इतिहास में 'लंबकर्ण' और 'मोरिया' दो प्रमुख क्षत्रिय गुट थे। मोरिया वंश के राजाओं ने कई शताब्दियों तक अनुराधापुर से शासन किया।
- वे स्वयं को भारत के 'शाही मौर्य राजवंश' का ही वंशज मानते थे और इसी आधार पर राजसत्ता पर अपना दावा प्रस्तुत करते थे।

5. पुरातात्विक साक्ष्य (अभिलेख): श्रीलंका के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त शिलालेखों में 'मोरिया' उपाधि धारण करने वाले अधिकारियों और राजाओं का उल्लेख मिलता है, जो उनकी निरंतरता को प्रमाणित करते हैं। 12वीं शताब्दी के कुछ अभिलेखों में मौर्यों का उल्लेख 'कुंतल' और 'सिंहल' प्रांतों के प्राचीन शासकों के रूप में किया गया है।

श्रीलंका के इतिहास में **'मोरिया वंश' (House of Moriya / Moriyan Dynasty)** का सीधा और गहरा संबंध प्राचीन भारत के **मौर्य राजवंश (Mauryan Dynasty)** से जुड़ा हुआ है। इस संबंध और इतिहास के मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं:

6. श्रीलंका का 'मोरिया राजवंश' (House of Moriya)

श्रीलंका के प्राचीन अनुराधापुर साम्राज्य (Anuradhapura Kingdom) में **455 ईस्वी से 691 ईस्वी** के बीच शासन करने वाले राजवंश को 'मोरिया वंश' कहा जाता है।

- इस वंश के पहले प्रसिद्ध शासक **राजा धातुसेन (King Dhatusena)** थे, जिन्होंने 455 से 473 ईस्वी तक शासन किया। उन्होंने ही श्रीलंका में कृषि के विकास के लिए प्रसिद्ध सिंचाई टैंकों और ऐतिहासिक कलाकृतियों का निर्माण करवाया था।
- इस वंश के सबसे प्रसिद्ध राजाओं में उनके पुत्र **कश्यप प्रथम (Kashyapa I)** थे, जिन्होंने प्रसिद्ध चट्टानी दुर्ग **'सिगिरिया'** का निर्माण करवाया था।

7. मौर्य राजवंश (भारत) के साथ संबंध

श्रीलंका के इन शासकों के 'मोरिया' नाम और उनके वंश का आधार भारतीय मौर्य साम्राज्य से उनकी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक वंशावली से जुड़ा है:

- **नाम की उत्पत्ति (मोरिया से मौर्य):** पाली भाषा में 'मोर' का अर्थ मौर या मोर से है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों और श्रीलंका के बौद्ध ग्रंथों (*महावंश* आदि) के अनुसार, चंद्रगुप्त मौर्य और उनका कुल **'मोरिय'** कबीले से संबंधित था, जो पिप्पलिवन के शाक्य वंश की एक शाखा माने जाते हैं।
- **एतिहासिक जुड़ाव :** सम्राट अशोक के समय से ही भारत और श्रीलंका के बीच बौद्ध धर्म (थेरवाद) के प्रसार के माध्यम से घनिष्ठ संबंध स्थापित हो गए थे। अशोक ने अपने पुत्र महिन्द और पुत्री संघमित्रा को बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए श्रीलंका भेजा था। महेंद्र के साथ अन्य मौर्य जन भी वहाँ गए और वही बस गए उन्ही के वंशजो में से एक **धातुसेन** ने वहाँ मौर्यवंश की नीव रखी।
- **शाही वंशावली का दावा:** श्रीलंका के मोरिया राजवंश के राजा खुद को प्राचीन भारतीय मौर्य (मोरिया) साम्राज्य के वंशज या उसी महान क्षत्रिय कुल से जुड़ा हुआ मानते थे। इसी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक जुड़ाव के कारण उनकी इस राजशाही को श्रीलंका के इतिहास में **'मोरिया हाउस'** के रूप में दर्ज किया गया।

संक्षेप में, श्रीलंका का मोरिया राजवंश नाम और परंपरा दोनों दृष्टियों से भारत के प्राचीन मौर्य साम्राज्य की सांस्कृतिक विरासत और उसके प्रभाव का ही विस्तार माना जाता है। श्रीलंका का मौर्य राजवंश प्राचीन भारतीय मौर्य साम्राज्य की उस सांस्कृतिक और राजनैतिक विरासत का विस्तार था, जिसने समुद्र पार कर एक नए राष्ट्र के निर्माण में सहयोग दिया। राहुल मुनि जैसे विद्वान और महेंद्र जैसे धर्मप्रचारक मौर्यों के उस गौरवशाली पक्ष को उजागर करते हैं, जहाँ तलवार के स्थान पर 'ज्ञान' और 'धम्म' ने शासन किया।

❖ गांधार मौर्य राजवंश

गांधार (आधुनिक अफगानिस्तान और उत्तर-पश्चिमी पाकिस्तान) मौर्य साम्राज्य का एक अत्यंत सामरिक और महत्वपूर्ण सीमावर्ती प्रांत था। मगध के केंद्रीय शासन की शिथिलता के उपरांत, गांधार में मौर्यों की एक स्थानीय शाखा ने शासन किया, जो पश्चिम से होने वाले यवन (ग्रीक) आक्रमणों के विरुद्ध भारत की प्रथम रक्षा पंक्ति बनी रही। गांधार के मौर्य इतिहास को समझने के लिए तिब्बती इतिहासकार तारानाथ के वृत्तांत और यूनानी लेखक पॉलीबियस (Polybius) के विवरण अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

इस राजवंश के प्रमुख शोधपरक बिंदु निम्नलिखित हैं:

1. वीरसेन : गांधार में मौर्य सत्ता का उत्तराधिकार तिब्बती इतिहासकार लामा तारानाथ के अनुसार, सम्राट अशोक के उत्तराधिकारियों में 'वीरसेन' का नाम प्रमुखता से आता है, जिन्होंने गांधार क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से शासन किया था।

- **ऐतिहासिक संदर्भ:** वीरसेन अशोक के वंशज थे और उन्होंने उत्तर-पश्चिमी सीमांत पर मौर्य सत्ता को अक्षुण्ण रखा। आधुनिक इतिहासकारों, जैसे डॉ. थॉमस का मत है कि वीरसेन संभवतः मगध के मौर्य सम्राट 'सुभगसेन' के पूर्वज थे।

2. सुभगसेन (Sophagasenus) और यूनानी संधि (206 ई.पू.): गांधार के मौर्य इतिहास का सबसे प्रमाणित पात्र 'सुभगसेन' (Sophagasenus) है। यूनानी इतिहासकार पॉलीबियस ने अपनी कृति में उनका वर्णन एक शक्तिशाली भारतीय राजा के रूप में किया है।

- **अन्तियोकस तृतीय के साथ संधि:** 206 ई.पू. में सीरिया के सेल्युकस वंशीय राजा **अन्तियोकस तृतीय (Antiochus III)** ने हिंदूकुश पर्वत को पार कर गांधार पर आक्रमण किया। पॉलीबियस के अनुसार, अन्तियोकस का सामना भारतीय राजा सुभगसेन से हुआ।
- **संधि और उपहार:** सुभगसेन ने अपनी कूटनीतिक कुशलता का परिचय देते हुए अन्तियोकस के साथ अपनी मैत्री को नवीनीकृत किया। उपहार स्वरूप उन्होंने यूनानी राजा को 150 हाथी प्रदान किए। पॉलीबियस लिखता है कि सुभगसेन ने "हाथी प्राप्त किए, जब तक कि उनका कुल योग एक सौ पचास हाथियों तक नहीं पहुंच गया"।
- **पहचान का विमर्श:** कुछ इतिहासकारों का मानना है कि 'सुभगसेन' वास्तव में कश्मीर के राजा जलौक की ही एक पदवी थी या वे उनके वंशज थे।

3. तक्षशिला: मौर्यों का राजनैतिक और शैक्षणिक केंद्र तक्षशिला गांधार की राजधानी थी और मौर्य साम्राज्य की पांच प्रमुख प्रांतीय राजधानियों में से एक थी।

- **आर्यपुत्रों का शासन:** मौर्य परंपरा के अनुसार, गांधार जैसे महत्वपूर्ण सीमावर्ती प्रांतों का प्रशासन 'आर्यपुत्रों' (राजकुमारों) या 'राष्ट्रीयन' (प्रांत प्रमुख) द्वारा चलाया जाता था। स्वयं सम्राट अशोक राजा बनने से पूर्व तक्षशिला के राज्यपाल रहे थे।
- **शिक्षा का केंद्र:** आचार्य चाणक्य तक्षशिला विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के प्रमुख आचार्य थे, जहाँ उन्होंने चंद्रगुप्त मौर्य को 'महाकुलीन' गुणों और वेदों की शिक्षा देकर दीक्षित किया था।

4. गांधार में मौर्य कला और धम्म विजय: गांधार क्षेत्र सम्राट अशोक के 'धम्म' प्रसार का प्रमुख केंद्र था।

- **अभिलेखीय साक्ष्य:** शहबाजगढ़ी और मानसेरा से प्राप्त अशोक के शिलालेख (जो खरोष्ठी लिपि में हैं) इस क्षेत्र में मौर्यों के प्रशासनिक और नैतिक प्रभाव की पुष्टि करते हैं।
- **धार्मिक निरंतरता:** बौद्ध ग्रंथों के अनुसार, अशोक ने गांधार और कम्बोज क्षेत्रों में भी धम्म महामात्रों की नियुक्ति की थी।

5. गांधार शाखा का पतन: सुभगसेन के पश्चात गांधार में मौर्य सत्ता क्षीण होने लगी। लगभग 185-180 ई.पू. के दौरान, बैक्ट्रियन यूनानी राजाओं (Indo-Greeks) के आक्रमणों ने गांधार की मौर्य शाखा का अंत कर दिया, जिसके बाद यह क्षेत्र यवन शासन के अधीन चला गया।

गांधार का मौर्य राजवंश मौर्य साम्राज्य की उस अखंडता का प्रतीक था जो हिंदूकुश पर्वतमाला तक विस्तृत थी। वीरसेन और सुभगसेन जैसे शासकों ने न केवल मौर्य सीमाओं की रक्षा की, बल्कि यूनानी सम्राटों के साथ बराबरी के स्तर पर कूटनीतिक संबंध भी बनाए रखे। सुभगसेन की विशाल हस्ति-सेना मौर्यों के सैन्य सामर्थ्य का अंतिम वैश्विक प्रमाण थी।

❖ खोतान मौर्य राजवंश

1. भौगोलिक स्थिति एवं नामकरण

- **स्थिति:** तारिम बेसिन में स्थित एक प्रमुख मरूद्यान (ओएसिस) राज्य।
- **संस्कृत एवं चीनी नाम:** संस्कृत ग्रंथों में इसे **'कुस्तान' (Kustana)** तथा चीनी स्रोतों में **'युतियान' (Yutian)** कहा गया है।[59]

2. उपनिवेशन एवं मौर्य राजवंश की स्थापना का आख्यान

- **मूल अनुश्रुति:** मौर्य सम्राट अशोक के विद्रोही व असंतुष्ट पुत्र राजकुमार **कुस्तान** द्वारा ईसा पूर्व ३री शताब्दी के आसपास खोतान के उपनिवेशन और राजवंश की स्थापना की गई।[60]
- **प्राथमिक धार्मिक एवं ऐतिहासिक ग्रंथ:** यह आख्यान मुख्य रूप से प्राचीन तिब्बती ऐतिहासिक ग्रंथ **"ली देश की भविष्यवाणी" (*Li yul lo rgyus pa*)** में संरक्षित है (जिसका विद्वान एफ.डब्ल्यू. थॉमस द्वारा अनुवाद एवं विश्लेषण किया गया है)।[61]
- **सांस्कृतिक स्थापना:** राजकुमार कुस्तान ने भारतीय और गांधार के समर्थकों के साथ मिलकर इस क्षेत्र को बसाया और मौर्य साम्राज्य से जुड़ी राजनीतिक व्यवस्था तथा बौद्ध सांस्कृतिक परंपराओं की नींव रखी।[62]
- **राजधानी की स्थापना:** तिब्बती अनुश्रुतिओं के अनुसार कुस्तान के पुत्र **ये-इ (Ye-i)** ने राज्य की राजधानी का निर्माण करवाया।
- **चीनी ग्रंथों का संदर्भ:** चीनी वृत्तांतों में इनकी पहचान राजा **'यी-लिन' (Yii-lin)** से ये-इ की पहचान की जाती है।
- **राजकुमार कुणाल का संदर्भ:** बौद्ध ग्रंथ **'दिव्यावदान'** तथा चीनी यात्री **ह्वेनसांग** के विवरणों में अशोक के एक अन्य पुत्र **कुणाल** (तक्षशिला के उपराजा/वायसराय) का उल्लेख मिलता है, जो राजदरबार के षड्यंत्रों से क्षुब्ध होकर भारत छोड़कर खोतान चला गया था।[63] [64]

3. विजित राजवंश एवं प्रमुख शासक

- **वंश की स्थापना:** ये-इ के पुत्र **विजित-संभव (Vijita-Sambhava)** के गद्दी संभालने पर 'विजित राजवंश' की नींव पड़ी।
- **चीनी स्रोतों में नाम:** चीनी ऐतिहासिक ग्रंथों में इस वंश को **'वेज-ची' (Wej-chi)** नाम से दर्ज किया गया है।

---

[59] Kamlesh Kapur, *Portraits of Nation,* page 330. Link
[60] The Age of Imperial Unity (History of India), page 640 Link
[61] W. W. Rockhill, The Life of the Buddha and the Early History of His Order (1884), page- 236 (द लाइफ ऑफ द बुद्ध, पृष्ठ 236)
[62] Literary history of ancient India, in relation to its racial and linguistic affiliations by Chandra Chakraberty, page 156 Link
[63] Nilakanta K. A. Sastri, . *Age of Nandas and Mauryas.* page 220. Link
[64] Asoka and the Decline of the Mauryas by Romila Thapar, page 131 Link

- **बौद्ध धर्म का आगमन:** विजित-संभव के शासनकाल के ५वें वर्ष में खोतान में औपचारिक रूप से बौद्ध धर्म का आगमन हुआ।
- **विजित-धर्म:** इस वंश में ११ राजाओं के बाद विजित-धर्म एक शक्तिशाली व युद्धप्रिय शासक बना, जिसने अंत में बौद्ध धर्म अपनाकर काशगर में संन्यास लिया। चीनी विवरणों के अनुसार २२० से २६४ ईस्वी के बीच काशगर खोतान के अधीन था।
- **विजित-कीर्ति का भारत अभियान:** विजित-सिंह के बाद राजा विजित-कीर्ति गद्दी पर बैठा, जिसने कुषाण सम्राट कनिष्क (या किसी अन्य कुषाण शासक) के साथ मिलकर भारत पर सैन्य अभियान चलाया और **साकेत (अयोध्या)** पर विजय प्राप्त की।

4. जनसांख्यिकीय, भाषिक एवं प्रशासनिक साक्ष्य

- **प्रवास एवं शासक वर्ग:** तक्षशिला क्षेत्र के भारतीय प्रवासियों के बसने के साक्ष्य मिलते हैं। यहाँ का शासक वर्ग ८वीं-९वीं शताब्दी के उइगर तुर्क आक्रमणों तक मुख्य रूप से भारतीय मूल का बना रहा।
- **भाषा एवं लिपियाँ:** सामान्य जनजीवन और प्रशासनिक कार्यों में **प्राकृत भाषा** का प्रयोग होता था तथा इसे लिखने के लिए **खरोष्ठी** एवं **ब्राह्मी** लिपियों का उपयोग किया जाता था।

5. अभिलेखीय एवं मुद्राशास्त्रीय स्रोत (Inscriptions & Coins)

- **कुषाण मुद्राएँ:** कडफिसेस और कनिष्क जैसे कुषाण सम्राटों के सिक्के प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुए हैं।
- **द्विभाषी सिक्के (Indo-Chinese Coins):** लगभग ४० ऐसे द्विभाषी सिक्के मिले हैं जिनके मुख्य भाग (Obverse) पर चीनी भाषा के लेख तथा पृष्ठ भाग (Reverse) पर खरोष्ठी लिपि में प्राकृत भाषा के लेख अंकित हैं, जो एक मिश्रित इंडो-चाइनीज राजनीतिक संस्कृति को दर्शाते हैं।
- **अभिलेखीय साक्ष्य:** खरोष्ठी भाषा के अभिलेखों में खोतानी मौर्य शासकों द्वारा **'महाराज राजातिराज-देव विजित-सिंह'** (***Maharaja Rajatiraja-deva Vijita-Simha***) जैसी भव्य भारतीय-कुषाण राजसी उपाधियाँ धारण करने के प्रमाण मिलते हैं।

ॐ शान्तिः •शान्तिः •शान्तिः ॐ

"कटिवय मते हि सवलोक हित"

— सम्राट अशोक

"सर्वकल्याण ही मेरा कर्त्तव्य है।"

॥ समाप्त ॥